माली

लेखकः—

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

रूपान्तरकार

कामताप्रसाद श्रीवास्तव

: प्रकाशक :

राजेन्द्र कुमार एण्ड ब्रदर्स

बलिया

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक भारतीय संस्कृति के मूर्तिमान प्रतीक कवीन्द्र रवीन्द्र लिखित "गार्डनर" का अविकल अनुवाद है।

अनन्त शान्ति की गोद में विश्राम करने के पूर्व ही महान कलाकार ने साहित्य-जगत रूपी उद्यान में विभिन्न प्रकार के पुष्पों के ८५ पौधे लगाये हैं। प्रत्येक पुष्प की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। कोई पुष्प अध्यात्मवाद के सौरभ से अखिल विश्व को सुरभित करता है, तो कोई निराशा की विशाल बालुका तट पर आशा रूपी वसन्त की वासन्तिकता छिटकाता है; कोई क्रान्ति का सौरभ लुटाकर कामगारों तथा मजलूमों को प्रेरणा प्रदान करता है, और उन्हें बर्बरता के विरुद्ध लोमहर्षक युद्ध करने के लिए उकसाता है।

इन पौधों की खास विशेषता यह है कि ये कवीन्द्र रवीन्द्र जैसे कुशल माली के हाथों से सँवारकर लगाये गये हैं।

इस महान कलाकार में आधुनिक युग का अदम्य विद्रोह था। डाक्टर नगेन्द्र के अनुसार भारत ने अपना—'सत्यं शिवं सुन्दरम्' उनमें साकार कर दिया था।

—अनुवादक

१

सेवक

अपने सेवक पर कृपा कीजिए, मेरी रानी !

रानी

मजलिस उठ चुकी है और हमारे सभी दास चले गये हैं। तुम विलम्ब करके क्यों आये हो ?

सेवक

और सेवकों से फुरसत पा चुकने पर ही तो मेरी बारी (पारी) आयी है !

मैं यह पूछने के लिए आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ कि आपके इस अन्तिम दास के लिए क्या आज्ञा है ?

रानी

जब विलम्ब हो गया है तो तुम आशा ही क्यों करते हो ?

सेवक

आप मुझे अपने फूलों के बगीचे का माली बना लीजिये।

रानी

यह कैसी बेवकूफी है?

सेवक

मैं अपना दूसरा काम छोड़ दूँगा।

मैं अपनी तलवार और बरछी धूल में फेंक देता हूँ। मुझे दूर के राजदरबारों में मत भेजिये; नया-नया मैदान मारने के लिए मत कहिये; किन्तु आप मुझे अपने फूलों के बगीचे का माली अवश्य बना लीजिये।

रानी

अच्छा, तुम कौन-सा काम करोगे?

सेवक

मैं आपकी फुरसत की घड़ियों में आपकी सेवा-सुश्रूषा करूँगा।

भोर में उठकर आप जिन हरित पथों पर हवाखोरी करती हैं, मैं उन्हें ताजा रक्खूँगा। वहाँ आपके कोमल चरण पग-पग पर मुरझाने की ख्वाहिश रखनेवाले फूलों द्वारा खुशी के साथ अभिनन्दित होंगे।

मेरी रानी, मैं आपको सप्तपर्ण पेड़ की उन डालियों पर झूला लगाकर झुलाया करूँगा। जहाँ बालचन्द्र पत्तियों के झुरमुट में से झाँककर आपके अंचल को चूमने की कोशिश करेगा।

मैं आपके सिरहाने जलनेवाले दीये को खुशबूदार तेल से लबालब रक्खूँगा और आपके पैर रखनेवाली चौकी को नाना प्रकार से सजाकर अहर्निशि सुगन्धित रक्खूँगा।

रानी

अपनी इन सेवाओं के लिए तुम क्या इनाम लोगे?

सेवक

कमल के समान कोमल, नन्हीं-नन्हीं आपकी कलाइयों को मैं अपने हाथों में लेकर उनमें फूलों के कंकण पहिनाने की आज्ञा पाने की इच्छा करूँगा। आपके सुकुमार चरणों को अशोक के फूलों के रस से रंजित करूँगा और उनमें लगी धूल को अपने होठों के चुम्बन से साफ करूँगा। यही मेरी सेवाओं का भरपूर इनाम होगा।

रानी

मेरे सेवक, तुम्हारी प्रार्थना मंजूर हुई। तुम मेरे फूलों के बगीचे के माली बना लिये गये।

❋

७

"हे कवि, अब तुम्हारी जिन्दगी की शाम नजदीक है, और तुम्हारे बाल सफेद हो चले हैं।"

"क्या तुम अपने इस एकाकीपन में परलोक का भी सन्देश सुनते हो?"

"शाम हो चली है" कवि ने कहा—"किन्तु मैं सिर्फ इस इन्तजार में बैठा हूँ कि शायद कोई गाँव से इधर आ निकले, यद्यपि देर हो गयी है।"

"मैं इस ताक में हूँ कि शायद दो वियोगी तरुण, प्रेमी दिलों का मिलन हो जाय, और उन दोनों की प्यासी आँखें मुझसे भीख माँगें कि मैं अपनी रसीली, मीठी तान सुनाकर उनकी खामोशी भंग करूँ।"

"अगर मैं जिन्दगी से उदास होकर मौत एवं परलोक की फिक्र करने बैठूँ तो उन दोनों के लिए मुहब्बत का तराना कौन गावे?"

"शाम के समय की नक्षत्र-माला लुप्त हो रही है।"

"चिता की लपटें सुनसान नदी के तट पर धीरे-धीरे ठण्डी हो चली हैं।"

"क्षीण चाँद की धुँधली रोशनी है। सुनसान खण्डहरों से गीदड़ स्वर-में-स्वर मिला कर चिल्ला रहे हैं।"

"यदि कोई यायावर अपना घर छोड़कर रात का आनन्द लूटने आवे और सिर झुकाकर अन्धकार का खौफनाक झाँय-झाँय सुनने लगे, और ऐसे समय में अपना दरवाजा बन्द करके सांसारिक मोहमाया से विरक्त होने की कोशिश में लगूँ, तो उसके कानों में जिन्दगी की पोशीदी बातें कौन कहे?"

"यदि मेरे बाल सफेद हो रहे हैं तो इसमें कौन-सी अचरज की बात है।"

"मैं हमेशा इस गाँव के बच्चों के साथ बच्चा और बुड्ढों के साथ बुड्ढा बना रहता हूँ।"

"उनमें से किसी के चेहरे पर तो भोलापन एवं मीठी मुस्कराहट है और किसी की आँखों में चालाकी भरी चमक।"

"उनमें से कुछ की आँखों में दिन के समय खुशी में सराबोर आँसू की बूँदे हैं और कुछ की आँखों के आँसू अन्धकार में लीन हैं।"

"इन सभी की मुझे आवश्यकता है और इसीलिए मुझे परलोक की फिक्र करने की फुरसत नहीं है।"

"मैं सभी के लिए समवयस्क हूँ। अगर मेरे बाल सफेद हो चले हैं, तो इससे क्या?"

❀

३

भोर होते ही मैंने अपना जाल समुद्र में फेंका। मैंने अन्धकार-युक्त अतल से अजीबो-गरीब चीजें खींच निकालीं। किसी में मुस्कान की भाँति आभा थी, कोई आँसू की तरह कान्तिवाली थी। किसी की अरुणिमा नयी दुलहिन के कपोलों की भाँति थी।

जिस समय मैं अपनी दिन भर की कमाई लेकर घर पहुँचा, उस समय मेरी मुहब्बत (मेरे दिल की रानी) फूलों के बगीचे में बैठी किसी फूल की पँखुड़ियों को तोड़-तोड़कर अपना जी बहला रही थी।

क्षण-भर के लिए मुझे हिचकिचाहट हुई और फिर जो कुछ मैंने अन्धकारमय अतल से खींच निकाला था, उसके चरणों के समीप रखकर खामोश खड़ा हो गया।

उन चीजों की ओर देखकर वह बोली—"ये अजीबो-गरीब चीजें हैं क्या? इनकी उपयोगिता मैं समझ नहीं पाती!"

मारे शर्म के सिर झुकाकर मैं सोचने लगा—"इन चीजों के लिए मैंने न तो किसी से लोहा ही लिया है और

न इनको बाजार मे ही मोल लिया है। फिर भला ये चीजें मेरी प्रेमिका के उपहार के लिए उपयुक्त कैसे हो सकती थीं ?"

मैं सारी रात उन चीजों को एक-एक करके गली में फेंकता रहा।

सबेरा होते ही मुसाफिर आये, वे उन्हें उठा लिये और लेकर दूर देशों को चले गये।

※

४

आह! उन्होंने मेरा मकान बाजार-वाले गाँव के रास्ते पर क्यों बनाया?

वे अपनी लदी नावें लाकर मेरे पेड़ों के नजदीक बाँधती हैं।

वे अपनी इच्छा के अनुसार जहाँ-तहाँ आती-जाती हैं और आवारों के समान घूमा करती हैं।

मैं बैठा बैठा उन पर दृष्टिपात करता हूँ और मेरा समय योंही व्यतीत हो जाता है।

मैं उन्हें हटा भी तो नहीं सकता। मेरा सारा दिन योंही कट जाता है।

अहर्निशि उनके पैरों के शब्द मेरे दरवाजे पर सुनायी पड़ते हैं।

मैं फ़िजूल ही तो चिल्लाता हूँ—"मैं तुम्हें नहीं जानता!"

उनमें से कुछ को तो मेरी उँगलियाँ पहचानती हैं और कुछ को मेरी नासिका। नसों में बहता हुआ खून भी तो उनके जान-पहचान का मालूम होता है। कुछ मेरे सपनों की-सी जान-पहचान की प्रतीत होती हैं।

मैं उन्हें यहाँ से हटा भी तो नहीं सकता। मजबूर होकर उनसे कहना ही पड़ता है—"जिसकी भी इच्छा हो मेरे मकान पर आवे और जरूर आवे।"

प्रातःकाल मन्दिरों में घंटा बजता है। वे अपनी-अपनी डोलचियाँ लेकर आती हैं।

उनकी एड़ियों का रंग तो गुलाबी है, ऊषाकाल की ललाई उनके चेहरों पर खेल रही है।

उनको यहाँ से लौटा देने का सामर्थ्य मुझमें नहीं है, विवश होकर कहना ही पड़ता है—"मेरे फूलों के बगीचे में फूल चुनने के लिए आओ, इधर आओ।"

दोपहर को राजद्वार पर घंटा घहराता है। मैं नहीं जानता कि वे क्यों अपना सारा काम छोड़कर मेरे ही कुंज के पास रुकती हैं।

उनके बालों के फूलों का रंग पीला पड़ गया है और वे मुरझा गये हैं। उनकी बंशी का स्वर उदास है।

मैं उनको लौटाने में असमर्थ हूँ। मैं पुकारकर उनसे कहता हूँ—"मेरे पेड़ों के नीचे शीतल छाँह है। दोस्तो, यहाँ आओ!"

रात के समय विजन-वन में झींगुर शोर मचाते हैं। कौन मेरे दरवाजे पर आकर धीरे-धीरे साँकल खटखटाता है?

स्पष्टरूप से मैंने उसका चेहरा देखा, हम दोनों ही खामोश रहे और चारों तरफ रात की नीरवता छाई रही।

मैं भला अपने खामोश मेहमान को कैसे लौटा सकता था? मैं रात की घनी अन्धेरी चादर में से ही उसका चेहरा देखता रहा, और योंही सपने की घड़ियाँ बीत गयीं।

❀

५

मुझे अत्यन्त व्यग्रता हो रही है। सुदूरवर्ती चीजों के लिए मैं प्यासा हूँ।

मेरी आत्मा में धूमिल भविष्य का अंचल छूने के लिए बेकली का साम्राज्य छाया हुआ है।

महान् भविष्यत्, अहा तेरी बाँसुरी का तीव्र आमंत्रण !!

मैं खो जाता हूँ कि मैं उड़ने के लिए पंख-विहीन हूँ और मैं हमेशा के लिए यहाँ पर बन्दी हूँ।

मुझे उत्कंठा है, चेतना है, मैं एक परदेशी की भाँति हूँ।

तेरी हवा आ-आकर मुझे एक असम्भव-सी आशा बँधाती है। उस हवा के शब्द अस्फुट हैं।

तेरी भाषा आत्मीयता का परिचय दिलाती है।

अहा दुर्लभ वस्तु ! तेरी बाँसुरी का तीव्र आमंत्रण !

मैं भूल जाता हूँ, मैं बार-बार भूल जाता हूँ कि मुझे तेरा रास्ता मालूम नहीं है। मेरे पास उड़नेवाला घोड़ा भी तो नहीं है।

उत्तरोत्तर मेरी व्यग्रता बढ़ रही है। मैं अपने हृदय में भी यायावर बन गया हूँ।

विषाद घड़ियों की चिलचिलाती धूप में तेरा बृहदाकार, नीले आसमान में कैसी-कैसी शकल बनाता है!

हे सुदूरतम अन्त! अहा, तेरी बाँसुरी का तीव्र आमंत्रण!!

मैं भूल जाता हूँ, बार-बार भूल जाता हूँ कि जिस घर में मैं अकेला वास करता हूँ, उसके सभी द्वार बन्द हैं।

❀

६

पालतू चिड़िया पिंजड़े में थी और स्वच्छन्द चिड़िया जंगल में।

समय आने पर दोनों मिले, यह भी उनकी किस्मत का एक विधान था।

स्वच्छन्द चिड़िया ने कहा—"मेरे प्यारे, आओ जंगल को उड़ चलें।"

पिंजड़े में कैद चिड़िया ने धीरे से कहा—"तुम्हीं यहाँ आ जाओ, हम दोनों ही पिंजड़े में वास करेंगे।"

स्वच्छन्द चिड़िया ने कहा—"भला पिंजड़े के सीकचों के बीच में हम दोनों पंख कैसे फैला सकेंगे?"

पिंजड़े में बन्द चिड़िया ने कहा—"हाय! बाहर शून्य गगन में मुझे बैठने को स्थान कहाँ मिलेगा?"

स्वच्छन्द चिड़िया ने कहा—"मेरे प्यारे! सुन्दर विजन प्रदेश के गीत गाओ।"

पिंजड़े में बन्द चिड़िया ने कहा—"मेरे समीप बैठो, तो मैं तुम्हें विद्वानों की सारगर्भित बातें सिखाऊँ।"

जंगल में बसेरा लेनेवाली चिड़िया ने कहा—"नहीं, हाय नहीं, गीत कभी सिखाई नहीं जा सकती !"

पिंजड़े में बन्द चिड़िया ने कहा—"अफसोस, मुझे वन-गीत (वन-रागिनी) नहीं आते।"

यद्यपि उनके प्रेम की चाह प्रगाढ़ है, किन्तु वे कभी भी परस्पर पंख-में-पंख मिलाकर उड़ान नहीं भर सकते।

पिंजड़े के सीकचों के बीच से एक दूसरे पर दृष्टिपात करते हैं, किन्तु उनका परस्पर परिचय प्राप्त करने की इच्छा व्यर्थ है।

वे व्यग्र होकर पंख फड़फड़ाते हुए गाते हैं :—

"मेरी मुहब्बत, मेरे और समीप आओ।"

स्वतन्त्र चिड़िया ने कहा—"यह असंभव है। मैं पिंजड़े के बन्द द्वार से डरती हूँ।"

पिंजड़े में बन्द चिड़िया ने कहा—"हाय, मेरे पंख की सजीवता समाप्त हो गयी है !"

❀

७

माँ, तरुण राजकुमार आज हमारे दरवाजा से होकर गुज़रेंगे—घर का काम-काज कैसे करूँ ?

मुझे बाल सँवारना बता दो और यह भी बताओ कि मैं कपड़े कौन-से पहनूँ ।

तुम मेरी तरफ अचरज-भरी निगाह से क्यों देख रही हो, माँ ?

मुझे अच्छी तरह मालूम है कि वह एक बार भी नजर उठाकर मेरी खिड़की की ओर नहीं देखेंगे; मुझे विदित है कि वह देखते-देखते मेरे दृष्टि-पथ से ओझल हो जायँगे; मैं दूर से प्रति-क्षण क्षीण होता हुआ बाँसुरी का स्वर ही सुन सकूँगा और वह स्वर सिसकी लेता हुआ प्रतीत होगा ।

किन्तु तरुण राजकुमार हमारे दरवाजा से गुजरेंगे तो ? मैं सिर्फ उसी पल के लिए अपना सबसे सुन्दर वस्त्र पहनूँगी ।

माँ, तरुण राजकुमार हमारे दरवाजा से होकर गुजरे, और आजसूर्य की किरणें उनके रथ पर झलमला रही थीं ।

मैंने अपना घूँघट उठा लिया और हीरे का हार अपने गले से तोड़कर उनके पथ में फेंक दिया।

तुम मेरी ओर अचरज-भरी निगाह से क्यों देख रही हो, माँ?

मुझे भलीभाँति विदित है कि उन्होंने मेरा हार उठाया नहीं; मुझे यह भी विदित है कि वह रथ के पहिये के नीचे दबकर चकनाचूर हो गया। उस स्थान पर अब सिर्फ लाल चिन्ह मात्र अवशेष है। किसी को यह भी तो पता नहीं है कि मेरी भेंट किसके लिए अथवा क्या थी?

किन्तु तरुण राजकुमार हमारे दरवाजा से होकर गुजरे तो,—मैंने अपना वह रत्नहार उनके पथ में फेंक तो दिया।

❀

८

जब सिरहाने का दीया झिलमिलाकर गुल हो गया तब मैं भोर के चिड़ियों के साथ-साथ जाग पड़ी।

मैं फूलों की एक सुन्दर माला अपने ढीले जूड़े में पहनकर खुली खिड़की में बैठ गयी।

तरुण राही प्रभात की अरुणिमा में रास्ते से गुजरा। उसके गले में मोतियों की एक माला थी और बालसूर्य की किरणें उसके मुकुट पर झलमला रही थीं। वह हमारे दरवाजा पर रुका। उसने उत्सुकतापूर्वक पूछा—"वह कहाँ है ?"

किन्तु लज्यावश मैं न कह सकी—"वह मैं ही हूँ।"

गोधूलि का समय था और दीये अभी तक नहीं जले थे।

मैं तेजी के साथ अपने बालों को सँवार रही थी।

तरुण राहगीर डूबते हुए सूर्य के धूमिल प्रकाश में अपने रथ पर आया। उसके घोड़ों के मुख से गाज निकल रहा था और उसके कपड़े धूल-धूसरित थे।

उसने मेरे दरवाजा पर उतरकर क्लान्त स्वर में पूछा—"वह है कहाँ ?"

किन्तु लज्यावश मैं न कह सकी—"वह मैं ही हूँ।"

अप्रैल मास की रात है। मेरे कमरे में दीया जल रहा है।

दक्षिणी पवन मन्दगति से चल रहा है। शोर मचाने वाला तोता अपने पिंजड़े में सो रहा है।

मेरी कंचुकी मोर के कंठ के रंग की है और मेरी ओढ़नी हरी घास के रंग की है।

मैं खिड़की के समीप फर्श पर बैठी हुई शून्य पथ की ओर दृष्टिपात कर रही हूँ।

विभावरी तमसा का घना दुकूल ओढ़े थी। मैं सारी रात गुनगुनाती रही—"मैं ही वह हूँ, निराश पथिक, मैं ही वह हूँ।"

*

६

जब रात के समय मैं अकेले सहेट-स्थली को जाती हूँ तो न तो चिड़ियाँ ही गाती हैं और न हवा ही चलती है। रास्ते के दोनों ओर कतार में मकान खामोशी के साथ खड़े रहते हैं।

प्रत्येक पद पर जोर से बज उठनेवाले यह मेरे ही तो नूपुर हैं। मै शर्म के मारे गड़ी जाती हूँ।

जब मै छज्जे से उनके पैरों की ध्वनि सुनने की चेष्टा करती हूँ तो पेड़ों की पत्तियों के बीच नीरवता का साम्राज्य छाया रहता है और सुपुप्त रणबाँकुड़ा के घुटने पर पड़ी हुई तलवार की तरह नदी का पानी खामोश हो जाता है।

यह मेरा ही तो दिल है, जिसमें ज़ोरों की धड़कन पैदा हो जाती है। मैं नहीं समझ पाती कि यह धड़कन कैसे बन्द करूँ।

जब प्रियतम मेरे समीप आ विराजते हैं, उनके आने से मेरा अंग सिहर उठता है और मेरी पलकें नीचे झुक जाती हैं तब रात अन्धकार-युक्त हो उठती है, हवा दीये को बुझा देती है और नक्षत्र-मण्डल बादलों से आच्छादित हो जाता है।

यह मेरी ही छाती का रत्न है जो अपनी चमक से प्रकाश बिखेरता है। मैं नहीं जानती कि इसे कैसे छिपाऊँ।

＊

१०

अपना काम बन्द कर दे, बहू। सुन, मेहमान आ गया है।

क्या तू सुनती नहीं? वह हौले-हौले दरवाजा की सिकड़ी हिला रहा है?

देखना, कहीं तेरे पायल की ध्वनि जोर से न निकल पड़े और तेरे चरण उससे मिलने के लिए कहीं जल्दी से न उठ जायँ।

अपना काम बन्द कर दे, बहू। शाम-समय मेहमान आ गया है।

नहीं, यह आवाज़ खौफनाक आँधी की नहीं है, डरो मत बहू।

अप्रैल मास का पूर्ण चाँद निकल रहा है। आँगन में कुछ धूमिल प्रतिबिम्ब-सा पड़ रहा है। आसमान आलोकित हो उठा है।

इच्छा हो तो घूँघट अपने मुँह पर खींच लो और यदि भयभीत होती हो तो दरवाजा तक दीया लेती आओ।

नहीं, यह आवाज़ खौफनाक आँधी की नहीं है, डरो मत बहू।

यदि शर्म मालूम होती हो तो उससे मत बोलना, और जब उससे देखा-देखी हो तो दरवाजा के एक तरफ खड़ी हो जाना।

यदि वह कुछ पूछे तो तू अपनी निगाहें खामोश कर लेना।

दीया से उसका पथ आलोकित करते समय अपने हाथ के कंकण को बजने से बचाना।

यदि शर्म मालूम होती हो तो उससे मत बोलना।

क्या तूने अपना काम-काज खतम नहीं किया बहू ? सुन, मेहमान आ गया है।

क्या अभी तक तूने गोशाला का दीया नहीं जलाया ?

क्या सन्ध्या समय की पूजन की थाली तूने अभी तक नहीं सजायी ?

क्या तूने सौभाग्य-सिन्दूर नहीं लगाया है और क्या तूने अभी रात का शृंगार-पटार नहीं किया है ?

बहू, सुनती है,—मेहमान आ गया है।

अब अपना काम-धन्धा बन्द कर दे।

❋

११

तुम जिस रूप में भी हो, चली आओ। शृंगार-पटार में अब अधिक समय मत लगाओ।

यदि तुम्हारी गूँथी हुई वेणी ढीली हो गयी है, माँग सीधी नहीं कढ़ी है और कंचुकी के बन्द खुले हैं तो इसकी फिक्र मत करो।

तुम जिस रूप में भी हो, चली आओ। शृंगार-पटार में अधिक समय मत लगाओ।

तुम हरित पथ पर से होकर जल्दी से आओ।

यदि ओस के क़तरे से तुम्हारे पैरों का महावर धुलता है, पायल के छल्ले ढीले हो गये हैं अथवा हार के मोती बिखर रहे हैं तो इसमें चिन्ता की कोई बात नहीं।

हरित पथ पर से होकर जल्दी से आओ।

बादलों से आच्छादित होते हुए आकाश को देखती हो न?

नदी के उस पार सारसों की पंक्तियाँ उड़ रही हैं और रह-रहकर हवा के झोंके चल रहे हैं।

घबड़ाये हुए पशु गाँवों की ओर भागे जा रहे हैं।

बादलों से आच्छादित होते हुए आकाश को देखती हो न ?

शृंगार के लिए तुम व्यर्थ ही दीया जला रही हो। हवा के झोंके से वह तिलमिलाकर गुल हो जाता है।

कौन देखता है कि तुमने आँखों में काजल लगाया है अथवा नहीं। तुम्हारी आँखें तो योंही काले बादलों से भी अधिक काली हैं।

शृंगार के लिए तुम व्यर्थ ही दीया जला रही हो। वह तो गुल हो जाता है।

तुम जिस रूप में भी हो, चली आओ। शृंगार-पटार करने में अधिक समय मत लगाओ।

यदि फूलों की माला गूँथी नहीं गयी है और कंकण का मुख बन्द नहीं हुआ है, तो कौन देखता है ?

आकाश बादलों से आच्छादित हो गया है—अब तो बहुत देर हो गयी है !

तुम जिस रूप में भी हो, चली आओ। शृंगार-पटार में अधिक समय मत लगाओ।

❀

१२

यदि तुम शीघ्रातिशीघ्र अपना घड़ा भरना चाहती हो तो आओ, मेरे झील के पास आओ।

जल तुम्हारे पैरों को चारों ओर से स्पर्श करके अस्फुट शब्दों में तुमसे अपनी पोशीदी बातें कहेगा।

जानेवाली बरसात की स्निग्ध छाया बालू के कणों पर पड़ रही है और पेड़ों की नीली पंक्ति पर घने बादल उसी प्रकार झुके हुए हैं जिस प्रकार तुम्हारी भौंहों पर तुम्हारे घने केश।

तुम्हारे पैरों की ध्वनि मुझे अच्छी तरह मालूम है, क्योंकि वह हमेशा ही हमारे दिल में गुंजित होती है।

आओ, यदि जल ही भरना है तो मेरे ही झील पर आओ।

यदि निर्द्वन्दतापूर्वक पानी में घड़ा छोड़कर बैठना ही चाहती हो तो आओ, मेरे झील पर आओ।

हमारे झील की ढालू जमीन हरी-भरी है तथा वन-पुष्पों की भरमार है।

यहाँ फिक्र तुम्हारी आँखों से उसी प्रकार दूर भाग जायगी जिस प्रकार पक्षी अपने घोंसले से उड़ जाता है।

यहाँ तुम्हारी ओढ़नी खिसककर तुम्हारे पैरों के पास लोटने लगेगी।

यदि तुम शीघ्रातिशीघ्र अपना घड़ा भरना चाहती हो तो आओ,—मेरे झील के पास आओ।

यदि तुम्हें अपना अन्य खेल छोड़ करके नहाना ही हो तो, आओ—मेरे झील पर आओ।

तुम अपनी नीली ओढ़नी झील के किनारे फेंक दो, क्योंकि नीला जल तुम्हें आच्छादित कर अपने अन्दर छिपा लेगा।

पानी की लहरें उछल-उछलकर तुम्हारी सुराहीदार गर्दन का चुम्बन करने तथा तुम्हारे कानों में धीरे से पोशीदी बातें कहने को आवेंगी।

यदि तुमको नहाना ही है तो आओ,—मेरे झील पर आओ।

यदि पागलपन के कारण तुमको अपना प्राण त्यागना हो तो आओ,—मेरे झील पर आओ।

यह शीतल तथा परम गम्भीर है।

रात तथा दिन इसके तल पर सब एक समान हैं और संगीत में नीरवता के समान खामोशी है।

आओ, मेरे झील पर आओ,—यदि डूबकर ही प्राण त्यागना है, तो आओ।

❀

१३

मैंने कुछ भी तो नहीं माँगा। सिर्फ वन के किनारे पेड़ की ओट में खड़ा रहा।

ऊषाकाल की आँखें अब भी अलसाई थीं और हवा में ओस अब तक बनी हुई थी।

भींगी घास की अलस खुशबू धरती पर फैले हुए हल्के कुहासे में सराबोर थी।

बरगद के पेड़ के नीचे तुम अपने मुलायम हाथों से गाय का दूध निकाल रही थीं।

और मैं,--खामोश खड़ा था।

मेरे मुख से एक शब्द भी तो न निकला। नजर से दूर झाड़ी में बैठी हुई सिर्फ चिड़ियाँ ही मीठी तान सुनाती रहीं।

आम का पेड़ गाँव के रास्ते पर बौरों की वर्षा कर रहा था और शहद की मक्खियाँ क्रमशः गुंजार करती हुई आ रही थीं।

शिवालय का दरवाजा जो तालाब की ओर स्थित है—

अभी ही खुला था। किसी पुजारी ने हर-हर महादेव कहते हुए स्तोत्र-पाठ आरंभ कर दिया था।

अपनी गोद में बाल्टी रक्खे हुए तुम गाय का दूध निकाल रही थी।

और मैं,—अपनी रिक्त बाल्टी लिए खड़ा था।

मैं तुम्हारे समीप भी तो नहीं आया।

शिवालय के घंटे-घड़ियाल के शब्द से आसमान गूँज उठा था।

सड़क पर पशुओं के खुरों से धूल उड़ने लगी थी।

ऊपर तक जल से भरी गगरिया लिए स्त्रियाँ नदी-तट से आने लगी थीं।

तुम्हारी चूड़ियाँ बज रही थीं और दूध की बाल्टी के ऊपर गाज निकलने लगा था।

प्रभात का समय भी बीत गया और मैं तुम्हारे समीप न आया।

❀

१४

दोपहर बीतने पर बाँस की शाखाएँ हवा से खड़खड़ा रही थीं,—मैं न जाने क्यों सड़क पर आगे बढ़ रहा था।

छाया अपनी लम्बी बाहें फैलाकर शीघ्रगामी प्रकाश के पावों से लिपट रही थी।

गाते-गाते कोयलें थकान महसूस करने लगी थीं।

फिर भी मैं न जाने क्यों सड़क के किनारे-किनारे आगे बढ़ता जा रहा था।

पानी के नजदीक की झोंपड़ी एक अत्यन्त घने पेड़ से ढँकी हुई थी।

अन्दर कोई अपने काम में व्यस्त था और उसकी चूड़ियों की झंकार झोंपड़ी के कोने में मधुर संगीत पैदा कर रही थी।

न जाने मैं क्यों उस झोंपड़ी के सामने खड़ा हो गया।

यह पतला टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता कितनी ही अमराइयों और कितने ही सरसों के खेतों से होकर गया है।

यह रास्ता गाँव के शिवालय की ओर भी गया है, और घाट की ओर भी तो गया है।

न जाने मैं फिर भी क्यों इस झोंपड़ी के समीप ठिठक गया।

बरसों की बात है। वायु-संचरित मार्च मास के दिन थे। वायु में वसन्त ऋतु का आलस्य पैदा करनेवाला अस्फुट शब्द व्याप्त था। आम के बौर धरती पर गिर रहे थे।

जल हिलोरें लेकर पीतल की झारी का चुम्बन करता था।

न जाने क्यों मुझे उस मार्च मास की याद ताजी हो रही है।

छाया गहरी होती जा रही है और पशु अपने-अपने स्थानों को लौट रहे हैं।

सुनसान मैदान में रोशनी भी फीकी पड़ गयी है और ग्रामीण लोग नाव की प्रतीक्षा में घाट पर खड़े हैं।

न जाने क्यों मैंने धीरे-धीरे अपने कदम पीछे कर लिए।

*

१५

जिस प्रकार मृग अपनी ही खुशबू से पागल होकर घने जंगल में दौड़ता फिरता है, ठीक वैसी ही दशा मेरी भी है।

मई के मध्य महीने की रात है, और दक्षिणी पवन चल रहा है।

मैं अपना रास्ता भूलकर भटक रहा हूँ। मैं दुर्लभ चीज की तो तलाश कर रहा हूँ और जिसकी तलाश में नहीं हूँ, वह मुझे मिल रही है।

मेरी कामनाओं की परिछाइंं मेरे दिल से निकलकर नृत्य कर रही है।

चमकीली परिछाइंं नाचती-नाचती अग्रसर हो रही है।

मैं उसे कसकर पकड़े रहना चाहता हूँ; किन्तु वह मुझसे छटककर निकल जाती है, और मुझे भटकाती रहती है।

मैं दुर्लभ चीज की तो तलाश कर रहा हूँ, और जिसकी तलाश में नहीं हूँ, वह मुझे मिल रही है।

❀

१६

हाथ एक दूसरे को स्पर्श करते हैं तथा आँखें एक दूसरे का सविलम्ब अवलोकन करती हैं,—और इनसे हमारे दिलों के इतिहास का श्रीगणेश होता है।

मार्च महीने की चाँदनी रात है, फूली हुई मेंहदी का सौरभ वायुमण्डल में व्याप्त है। एक ओर तो हमारी निरस्कृत बाँसुरी पड़ी हुई है और दूसरी ओर तुम्हारी फूलों की माला आधी गूँथी हुई पड़ी है।

हमारा और तुम्हारा यह प्रेम संगीत की तरह सरल है।

केसरिया रंग की तुम्हारी यह ओढ़नी मेरी आँखों को पागल बनाये देती है।

मेरे लिए तुम्हारे सुकुमार हाथों द्वारा गूँथा हुआ जुही का हार मेरे दिल को श्लाघा की तरह पुलकित कर रहा है।

देने और न देने का, दिखाकर फिर छिपा लेने का यह ऐसा खेल है जिसमें कुछ अंश तो मुस्कान-युक्त लज्जा का है और कुछ अनावश्यक मीठी हिचकिचाहट का।

हमारा और तुम्हारा यह प्रेम संगीत की तरह सरल है।

इसमें न तो वर्तमान के सिवाय कोई रहस्य ही है और न असम्भव के लिए व्यर्थ का प्रयास। इस आकर्षण के पीछे किसी आशंका की परछाईं का जरा-सा आभास भी नहीं है और न अन्धकार की गहराई में टटोलने की ही जरूरत है।

हमारा और तुम्हारा यह प्रेम संगीत की तरह सरल है।

हम और तुम कभी आपसी बातचीत छोड़कर अनन्त मौन व्रत नहीं रखते और न कभी आशा के परे किसी अलभ्य वस्तु के लिए शून्य गगन में अपना हाथ फैलाते हैं।

जो कुछ भी हम परस्पर देते और पाते हैं, वही पर्याप्त है।

हमें सुख में से विषाद की मदिरा निकल आने का भय नहीं है, क्योंकि हमने उसे उसकी पराकाष्ठा तक नहीं निचोड़ा है।

हमारा और तुम्हारा यह प्रेम संगीत की तरह सरल है।

❀

१७

पीले रंग की चिड़िया पेड़ की टहनियों पर बैठी मीठी तान सुना करके हमारे मन-मयूर को नचा देती है।

हम दोनों की खुशी का सबसे बड़ा कारण तो यह है कि हम दोनों एक ही गाँव के निवासी हैं।

उसकी पालतू भेड़ों की युगल जोड़ी हमारे बगीचे के पेड़ों की ठण्ढी छाया में चरने आती है।

यदि वह जोड़ी हमारे जौ के खेत में भी घुस जाती है तो मैं अपनी गोद में उठा लेता हूँ।

हमारे गाँव का नाम है खंजन और हमारी नदी का नाम है अंजन।

हमारा नाम तो गाँव के सभी लोग जानते हैं,—और उसका नाम रंजन है।

हमारे और उसके निवास-स्थान के बीच में सिर्फ एक ही खेत है।

हमारी पुष्प-वाटिका में छत्ता लगानेवाली शहद की मक्खियाँ ही तो उसकी पुष्प-वाटिका में शहद संकलन करती हैं।

उसके घाट से बहाये हुए फूल ही तो उस स्थान पर बहते हुए आते हैं जहाँ पर हम स्नान करते हैं।

उनके खेतों के सूखे कुसुम के फूल चंगेलियों में भर-भर कर हमारे ही बाजार में तो बिकने आते हैं।

हमारे गाँव का नाम है खंजन, और हमारी नदी का नाम है अंजन।

हमारा नाम तो गाँव के सभी लोग जानते हैं,—और उसका नाम रंजन है।

उसके घर की ओर जानेवाला रास्ता बसन्त ऋतु में आम के बौरों के सौरभ से सुरभित रहता है।

जब उनके खेतों की अलसी (तीसी) तैयार हो जाती है तो हमारे भी खेतों में पटसन पुष्पित होता है।

उनकी झोंपड़ियों पर रोशनी फैलानेवाले सितारे हमें भी अपने आलोक से आलोकित करते हैं।

उसके तालाब को भरनेवाली बरसात ही हमारे कदम्ब-वन में भी जान डाल देती है।

हमारे गाँव का नाम है खंजन, और हमारी नदी का नाम है अंजन।

हमारा नाम तो गाँव के सभी लोग जानते हैं,—और उसका नाम रंजन है।

❀

१८

जब दोनों बहनें जल भरने जाती हैं तो वे यहाँ आकर मुस्कराने लगती हैं।

जब भी दोनों बहनें जल भरने जाती हैं, तभी पेड़ों की ओट में किसी का छिपकर खड़े रहना उन्हें जरूर ही मालूम हो गया होगा।

जब वे इस स्थान से होकर गुजरती हैं, तो मन्द स्वर में बोलने लगती हैं।

जब भी दोनों बहनें जल भरने जाती हैं, तभी पेड़ों की ओट में सदा ही किसी का छिपकर खड़े रहने की पोशीदी बातें उन्हें जरूर ही मालूम हो गयी होंगी।

जब दोनों बहनें यहाँ पर पहुँचती हैं तो उनकी झारियाँ सहसा हिल उठती हैं और झारियों का जल छलक उठता है।

उन्हें यह बात जरूर मालूम हो गयी होगी कि उनके पानी भरने जाने के समय पेड़ों की ओट में छिपे हुए व्यक्ति का दिल धड़क रहा है।

जब वे यहाँ पर पहुँचती हैं तो एक दूसरे की ओर अचरज-भरी निगाह से देखकर हँसने लगती हैं।

उनकी इठलाती हुई चपल चाल में कुछ ऐसी खिलखिलाहट है जिसके कारण उस व्यक्ति का दिमाग चकराने लगता है। वह पानी भरने जाने के समय पेड़ों की आड़ में छिपकर खड़ा रहता है।

❀

१६

कमर पर भरी गगरी रखे हुए तुम तो नदी के किनारे-किनारे जा रही थी।

तुमने तेजी से मुड़कर अपने हिलते हुए घूँघट के भीतर से हमारी तरफ क्यों देखा ?

चंचल हवा का झोंका आकर जिस तरह लहराते हुए पानी को कँपा करके सघन किनारे की ओर चला जाता है ठीक वही दशा मेरी तुम्हारे घूँघट के चितवन से हो गयी है।

प्रकाश-रहित घर में जिस प्रकार शाम के समय कोई पक्षी घुसकर, चारों तरफ, इस खिड़की से उस खिड़की की ओर उड़ा करता है और फिर अन्धकार में विलीन हो जाता है, ठीक उसी प्रकार तुम्हारी वह चितवन मुझे अनुभूत हुई थी।

तुम पर्वत-माला के पीछे छिपे हुए किसी तारा की भाँति हो और मैं पथ के पथिक की भाँति हूँ।

किन्तु जब तुम कमर पर भरी गगरी रखे नदी के किनारे-किनारे जा रही थी, तब जरा रुककर अपनी घूँघट की ओट से कटाक्ष क्यों किया था ?

❃

२०

यह हर रोज आता है और लौट जाता है।

जाओ, हमारे जूड़े का यह फूल उसे दे तो आओ, सखी।

यदि वह इस फूल के भेजनेवाले का पता पूछे तो परमात्मा के लिए उसे कुछ बताना मत,—क्योंकि यह तो बस, आकर लौट जाता है।

पेड़ के नीचे जहाँ वह धरती पर बैठा करता है।

सखी, उस स्थान पर फूल-पत्तियों का एक आसन तो बना आओ!

वह अपने दिल की बातें हमेशा पोशीदी रखता है; बस, आकर फिर लौट जाता है।

२१

वह तरुण यायावर भोर से हमारे ही द्वार पर क्यों आ बैठा ?

बाहर-भीतर आते-जाते समय मुझे उसी के पास से होकर गुजरना पड़ता है और मेरी नजर उसके चेहरे की ओर पड़े बिना रहती ही नहीं।

मैं निश्चय नहीं कर पाती कि मैं उससे बोलूँ अथवा खामोश रहूँ। वह मेरे ही द्वार पर क्यों आ बैठा ?

जुलाई मास के बादलों से आच्छादित रातें तमसा का घना दुकूल ओढ़े रहती हैं। पतझड़ में आकाश स्वच्छ रहता है। दाक्षिणी पवन चलने के कारण बसन्त ऋतु के सौम्य दिवस अशान्त रहते हैं।

वह नित्य नयी राग-रागिनियाँ छेड़ा करता है।

मैं घर-गिरस्ती के काम से विरक्त होकर उसकी ओर आकृष्ट हो जाती हूँ तथा मेरी आँखें बाष्पाकुल हो जाती हैं। वह तरुण बटोही हमारे ही द्वार पर क्यों आ बैठा ?

❀

२२

जब वह द्रुतगति से मेरे पास से होकर निकली तब मेरा शरीर उसके अंचल से स्पर्श हो गया।

किसी अज्ञात एवं अपरिचित हृदय रूपी द्वीप से सहसा बसन्त ऋतु की हवा का एक उष्ण झोंका मानों आकर मेरे शरीर में लगा।

सिर्फ एक कम्पायमान स्पर्श ही हमारे शरीर से हुआ था और वायु में उड़ती हुई किसी पुष्प की पंखड़ी की तरह ही वह पल भर में लुप्त भी हो गया था।

किन्तु उस स्पर्श का अस्फुट वार्ता की तरह ही मेरे हृदय पर प्रभाव पड़ा।

❀

२३

तुम वहाँ खामोश बैठी अपने कंकणों को सिर्फ अपना आलस्य-क्रीड़ा में ही क्यों झनझन बजाया करती हो ?

अपनी गगरी जल से भर लो। अब घर चलने का समय हुआ।

तुम वहाँ पर बैठी अपने हाथों से क्यों जल को हिलाती हो ? तुम अपनी उत्कंठा-भरी चितवन रास्ते पर डालती हुई क्यों किसी की तलाश कर रही हो ?

अपनी गगरी जल से भर लो और घर चलो।

सबेरा बीत रहा है और नीला जल बहता हुआ चला जा रहा है।

जल की लहरें भी तो आलस्य-क्रीड़ा में ही हँस रही हैं और अस्फुट शब्द उनके मुख से निकल रहे हैं।

आकाश के समीप उस उच्चस्थली पर घुमक्कड़ बादल संकुलित हुए हैं।

वे भी रुककर आलस्य-क्रीड़ा में ही तो तुम्हारे चेहरे की ओर नजर डालकर मुस्कराते हैं।

अपनी गगरी जल से भर लो और घर चलो।

❀

२४

हे सखी, अपने दिल की पोशीदी बातें छिपाकर न रखो !

सिर्फ मुझसे ही चुपके से कह दो।

मंजुल मुस्कान बिखेरने वाली, धीरे से वह गुप्त बात मुझसे कह दो। उसे मेरा दिल ही सुन पायेगा, कान नहीं सुन पायेंगे।

रात भीग गयी है। घर में नीरवता का साम्राज्य छाया हुआ है। चिड़ियों के घोंसले तक गहरी नींद में हैं।

हे सखी ! अस्फुट मुस्कानों, हिचकिचाते हुए आँसुओं, मीठी लज्जा तथा वेदना के साथ मुझे अपने दिल की वह पोशीदी बातें बता न दो !

*

२५

"युवक हमारे समीप आओ और सच-सच बता दो कि तुम्हारी आँखें उन्मत्त क्यों हैं ?"

"मैं नहीं जानता कि मैं कौन-सी जहरीली मदिरा पी गया हूँ जिसके कारण मेरी आँखें उन्मत्त हो उठी हैं !"

"धिक्-धिक्, कैसी शर्म की बात है !"

"कुछ लोग चतुर होते हैं तो कुछ बेवकूफ भी होते हैं, कितने सतर्क और कितने असतर्क होते हैं। कुछ आँखें हँसनेवाली और कुछ रोनेवाली भी तो होती हैं। मेरी आँखों में उन्मत्तता ही सही !"

"युवक, वहाँ पेड़ की ओट में खामोश क्यों खड़े हो ?"

"मेरे दिल के आभार से मेरे पैरों में शिथिलता आ गयी है, इसीलिये मैं यहाँ छाया में खामोश खड़ा हूँ।"

"छिः, कैसी शर्म की बात है !"

"कुछ लोग अपने राह पर बढ़ते रहते हैं, कुछ ठिठक जाते हैं। कुछ स्वतंत्र हैं और कुछ कैदी हैं। मेरे दिल के आभार से ही तो मेरे पैरों में शिथिलता आ रही है ?"

❀

२६

"जो कुछ भी तुम्हारे इच्छुक हाथों से मिलता है, मैं वही ग्रहण कर लेता हूँ। मैं उससे अधिक तो नहीं माँगता।"

"हाँ, हाँ, मैं भलीभाँति जानता हूँ, विनम्र योगी! तुम तो हमारा सब कुछ माँग लेते हो।"

"यदि आप मुझे एक तुच्छ फूल भी दे देंगे, तो मैं उसी को ग्रहण किये रहूँगा।"

"लेकिन शर्त यह कि उसमें काँटे हों।"

"मैं उन्हें भी बर्दाश्त करूँगा।"

"हाँ, हाँ, मैं तुम्हें भलीभाँति जानता हूँ, विनम्र भिखारी। तुम तो हमारा सब कुछ माँग लेते हो।"

"यदि तुम एक बार भी मेरी ओर दया-दृष्टि कर दो तो मेरा लोक-परलोक दोनों मधुर हो उठें।"

"लेकिन, यदि क्रूर चितवन से देखें, तो?"

"तो मैं हमेशा अपना दिल छिदवाया करूँ।"

"हाँ, हाँ, मैं तुम्हें भलीभाँति जानता हूँ, विनम्र, लजीले तथा विनीत योगी! तुम तो हमारा सब कुछ माँग लेते हो।"

❀

२७

"प्रेम में अटूट विश्वास रक्खो, चाहे उससे दुःख ही क्यों न मिले। अपना हृदय-द्वार मत बन्द करो।"

"नहीं मित्र, नहीं,—तुम्हारे शब्द अत्यन्त गूढ़ हैं। तुम्हारी बातें मेरी समझ के परे हैं।"

"प्रिये! दिल, आँसू तथा संगीत के साथ देने की चीज है।"

"नहीं मित्र, नहीं,—तुम्हारे शब्द अत्यन्त गूढ़ हैं। उन्हें समझने की क्षमता मुझमें नहीं है।"

"आनन्द तो शबनम के क़तरे की तरह क्षणभंगुर है,—हँसते ही खतम हो जाता है; लेकिन दुःख तो बलशाली तथा स्थायी है। इसलिए तुम अपनी आँखों में सविषाद प्रेम को ही जागृत करो।"

"नहीं मित्र, नहीं,—तुम्हारे शब्द अत्यन्त गूढ़ हैं। तुम्हारी बातें मेरी समझ के परे हैं।"

"कमल का फूल सूर्य के सामने खिल उठता है और अपना सब कुछ निछावर कर देता है। जाड़े के अत्यन्त कुहासे में तो वह कभी नहीं प्रफुल्लित होता है।"

"नहीं मित्र, नहीं,—तुम्हारे शब्द अत्यन्त गूढ़ हैं। तुम्हारी बातें मेरी समझ के परे हैं।"

❀

२८

तुम्हारी प्रश्न-सूचक आँखें उदास हैं। जिस प्रकार चाँद समुद्र की गहराई नापना चाहता है, उसी प्रकार तुम्हारी आँखें मेरा अभिप्राय जानना चाहती हैं।

मैंने शुरू से आखीर तक की अपनी जिन्दगी तुम्हारी आँखों के सामने खोलकर रख दी है। शायद इसी कारण तुम मुझे नहीं पहचानती हो।

यदि मेरा दिल अनमोल रत्न होता तो मैं उसके सैकड़ों टुकड़े करके तुम्हारे गले में पिरो देता।

यदि यह एक खूबसूरत, खुशबूदार तथा छोटा-सा फूल ही होता तो मैं उसे डाली से अलग कर तुम्हारे बालों में पिरो देता।

लेकिन यह तो हृदय है, मेरे दिल की रानी, इसका ओर-छोर कहाँ है?

यद्यपि इसकी सल्तनत की सीमा की जानकारी तुमको नहीं है, तो भी तो तुम इसकी मल्का हो।

यदि यह सुख-चैन की एक घड़ी ही होता तो भी यह एक सरल मुस्कान होता और तुम इसे देखकर एक क्षण में ही पहचान लेती।

यदि यह एक दारुण दुःख भी होता तो भी अविकल अश्रुधारा बनकर बिना शब्दों का पनाह लिए ही अपनी पोशीदी बातें बता देता।

किन्तु मेरे दिल की रानी! यह प्रेम है।

इसका हर्ष तथा विषाद असीम है और सम्पत्ति तथा कामनाएँ अनन्त हैं।

यह तुम्हारी ही जिन्दगी की तरह तुमसे नजदीक है, किन्तु तो भी तुम इसे पूर्णरूप से नहीं पहचान सकती।

❀

२६

प्राणेश्वर, मुझसे बोलो ! तुमने अभी जो कुछ गाया है, उसे शब्दों में व्यक्त करो ।

रात अन्धेरी है । तारे बादलों में छिप गये हैं । हवा पत्तियों के बीच सायँ-सायँ करती हुई संचरित हो रही है ।

मैं अपना केश खोल दूँगी । मेरा आसमानी रंग का कपड़ा मेरे शरीर से रात की तरह चिपका रहेगा । तुम्हारे सिर को अपने दिल से लगा लूँगी, और एकान्तवास की मधुर घड़ियों में तुम्हारे दिल के नजदीक अस्फुट शब्द करूँगी । अपनी आँखें बन्द करके तुम्हारी बातें सुनूँगी तथा तुम्हारे चेहरे की ओर नजर भी न उठाऊँगी ।

तुम्हारी बात समाप्त हो जाने पर हम दोनों चुपचाप बैठे रहेंगे । सिर्फ पेड़ ही अन्धकार में सायँ-सायँ करेंगे ।

रात के क्षीण हो जाने पर दिन का प्रारम्भ होगा । हम दोनों एक दूसरे की ओर ताकने के बाद अपने-अपने रास्ते पर चल देंगे ।

प्राणेश्वर, मुझसे बोलो ! तुमने अभी जो कुछ गाया है, उसे शब्दों में व्यक्त करो ।

❋

३०

तुम मेरे स्वप्न-आकाश में उमड़ते-घुमड़ते हुए बादलों के समान हो।

मैं अपनी प्रेमाकांक्षाओं द्वारा तुम्हारे तरह-तरह के चित्र अंकित किया करता हूँ।

तुम मेरी हो, हमेशा मेरी हो, मेरे अनन्त स्वप्न की अधिवासिनी!

मेरी वासनाओं की शोभा से रंजित होकर तुम्हारी एड़ियाँ गुलाबी लालाई-युक्त हैं, मेरे सायंकालीन संगीत की संकलनकारी!

मेरे विषाद की मदिरा से तुम्हारे होठों में कड़ुवा मीठापन आ गया है।

हे मेरे एकाकी सपनों की अधिवासिनी! तुम सदा मेरी हो।

अपने 'पैशन' की छाया से मैंने तुम्हारी आँखें काजल-युक्त कर दी है, मेरी गजरों की रानी!

मधुरिमे! मैंने अपने संगीत रूपी जादू में तुमको फँसा रक्खा है।

हे मेरे अमर सपनों की अधिवासिनी! तुम सर्वथा मेरी हो!

*

३१

मेरे हृदय-वन्यपक्षी को तुम्हारी आँखों में उसका नील गगन मिल गया है।

तुम्हारे नेत्र-युग्म मानों नक्षत्रों के साम्राज्य हैं, प्रभात के झूले हैं!

मेरे गीत उनकी गहराई में खो गये हैं।

अहा! मुझे भी उसी नेत्र रूपी गगन में, उसके एकान्त विस्तार में उड़ान भरने दो।

अहा! मुझे भी उस गगन में आच्छादित मेघमाला को चीरकर उसकी रोशनी में अपने पर फैलाने दो।

३२

क्या यह सब सच है, मेरे आशिक! बताओ तो सही, क्या यह सच है?

जब मेरी इन आँखों में बिजली की चौंध पैदा होती है,

तो क्या उस समय आपके दिल के घने बादल गम्भीर गर्जन के साथ प्रत्युत्तर देते हैं ?

क्या यह सच है कि मेरे होंठ नये प्रणय की अधखिली कली की तरह सुमधुर हैं ?

क्या मेरे अंग-प्रत्यंग में ग्रीष्मऋतु की यादगार सचमुच व्याप्त है ?

क्या मेरे पदों की गति के स्पर्शमात्र से ही धरती में से सांगीतिक मूर्च्छना पैदा होती है ?

क्या यह सत्य है कि मेरे बाहर निकलने पर रात की आँखों से तुषार रूपी आँसुओं की झड़ी लग जाती है—और क्या यह भी सच है कि सुबह की रोशनी मेरा आलिंगन कर वास्तव में आह्लादित होती है ?

दरअसल में आपकी मुहब्बत सदियों तक देश-देश मेरी तलाश में भटकती फिरी थी ?

और जिस समय आपको मिली उस समय आपकी चिरकालीन अभिलाषा मेरी मीठी बातों, मेरी आँखों तथा मेरे होठों द्वारा परम शान्ति को प्राप्त हुई थी ?

तो क्या मैं इसे सत्य समझूँ कि अनादि के रहस्य की रेखा मेरे छोटे-से मस्तक पर खिंची हुई है ?

मेरे आशिक ! क्या यह सब कुछ सत्य है ?

❀

३३

मेरे आलमगीर (प्राणवल्लभ)! मैं तुमसे मुहब्बत करती हूँ। मेरी इस धृष्टता को माफ करना।

भटके हुए पक्षी की तरह मैं अब तो फँसकर बेबस हो गयी हूँ।

जिस समय मेरा दिल डोल उठा था, उसी समय वह नग्नावस्था को प्राप्त हो गया। उसे अपनी मेहरबानी के पर्दे से ढाँक लो। मेरे आलमगीर (प्राणनाथ)! और मेरी मुहब्बत को माफ करो।

यदि तुम मुझसे मुहब्बत करने में भी मजबूर हो तो मेरी व्यथा को ही माफ कर दो, प्यारे!

दूर ही से मेरी ओर तिरछी चितवन से न देखो। मैं चुपचाप अपने स्थान को लौट जाती हूँ और वहीं पर मैं घुप अन्धकार में बैठी रहूँगी।

मैं अपने नंगे शर्म को दोनों हाथों से छिपाऊँगी।

तुम अपना मुह फेर लो तथा मेरे विषाद के लिए मुझे माफ कर दो, प्राणेश्वर!

और, यदि तुम मुझसे मुहब्बत ही करते हो तो मेरी खुशी को भी माफ करना, प्राणवल्लभ!

जब मेरा दिल आनन्द के सोते में बह चले, तो मेरे उस खौफनाक आत्मविसर्जन पर कहीं क़हक़हे मत लगाना।

जब मैं अपने तख्तताऊस पर बैठकर तुम पर निरंकुश मुहब्बत के द्वारा शासन करूँ अथवा देवियों की तरह तुम्हारे ऊपर अपनी कृपादृष्टि दिखलाऊँ तो मेरे उस घमण्ड को भी बर्दाश्त कर लेना प्राणवल्लभ! तथा मेरी खुशी को माफ़ करना।

❀

३४

प्राणवल्लभ! मेरी अनुभूति के बिना कहीं चले मत जाना।

मैं सारी रात बैठी-बैठी तुम्हारी प्रतीक्षा करती रही हूँ, और अब मेरी आँखें नींद से भारी पड़ गयी हैं।

मुझे आशंका है, कहीं मैं सोते-ही-सोते तुम्हें खो न बैठूँ।

प्राणेश्वर! मेरी अनुमति के बिना कहीं चले मत जाना।

मैं चौंककर बैठ गयी हूँ, और तुम्हें स्पर्श करने के लिए अपना हाथ फैलाती हूँ। मैंने सोचा—"क्या यह सपना है?"

काश, मैं अपने हृदयपाश से तुम्हारे पैरों को अवगुंठित करके अपनी छाती से बाँधकर रख सकती!

मेरे हृदय-सम्राट! मेरी अनुमति के बिना कहीं चले मत जाना।

✽

३५

तुम मुझे इसलिए मुगालता में रख रही हो कि कहीं मैं तुम्हारा भाव आसानी से न जान जाऊँ।

अपने आँसुओं को छिपाने के लिए तुम अपने मंजुल मुस्कान से अन्धा बना देती हो।

मैं तुम्हारी कला (चतुराई) भलीभाँति जानता हूँ।

जिस बात की कहने की तुम्हारी इच्छा है, वही तुम हर्गिज न कहोगी।

इस डर से कि कहीं मैं तुम्हारा सम्मान न करूँ, तुम सैकड़ों रीतियों से मुझसे दूर बचती हो।

कहीं मैं तुम्हें आम लोगों में न समझ लूँ, इसलिये तुम दूर हटकर खड़ी होती हो।

मैं तुम्हारी चतुराई से भलीभाँति परिचित हूँ।

जिस रास्ते से चलने की तुम्हारी प्रबल इच्छा है, उस रास्ते पर तुम् हर्गिज न चलोगी।

अन्य लोगों से अधिक स्वत्व होने के कारण तुम शान्त हो।

क्रोड़ागत असतर्कता के साथ तुम मेरी भेंट अस्वीकार कर देती हो।

मैं तुम्हारी पटुता से भलीभाँति परिचित हूँ।

जो चीज लेने की तुम्हारी प्रबल इच्छा है वही तुम हर्गिज न लोगी।

❋

३६

वह धीरे से बोला—"मेरे दिल की रानी! जरा आँखें तो खोलो।"

मैंने उसे झिड़ककर कहा—"जाओजी।" किन्तु वह तो भी न वहाँ से डिगा।

उसने मेरे दोनों हाथ पकड़ लिए। मैंने कहा—"छोड़ दो मुझे!" किन्तु तो भी वह न गया।

वह अपना चेहरा मेरे कान के पास ले गया। मैंने उसकी ओर नजर उठाकर कहा—"बलिहारी है तुम्हारी निर्लज्जता की! लेकिन वह अपनी जगह पर डटा रहा।

उसके होठों ने मेरे गुलाबी गालों को स्पर्श किया। मैं सिहरकर बोल उठी—"तुम तो बड़े ढीठ हो"—लेकिन वह तनिक भी शर्मिन्दा न हुआ।

उसने मेरे केश में एक फूल लगा दिया। मैं बोल उठी—"यह सब फजूल की बातें हैं!" किन्तु वह हतोत्साहित न हुआ।

उसने फूलों का गजरा मेरे गले से उतार लिया, और लेकर चला गया। अब मैं सिसक-सिसककर तड़प-तड़पकर अपने दिल से पूछती हूँ—अफसोस! "वह लौटकर आता क्यों नहीं।"

*

३७

शुभ्रे ! क्या तुम यह ताजा गजरा मुझे पहनाओगी ?

किन्तु, तुम्हें यह अच्छी तरह मालूम होना चाहिए कि मैंने अब तक सिर्फ एक ही गजरा बनाया है और वह भी कई-एक के लिए है। मेरा यह गजरा उनके लिए है जिनकी अस्पष्ट झलक क्षण-भर को ही हुआ करती है, जो अगम्य स्थलों तथा कवियों की गीत में वास करते हैं।

तुमने बदले में मेरा दिल माँगने में काफी देर कर दी है।

हाँ, एक ऐसा भी जमाना था जब मेरी जिन्दगी कली की तरह थी। तब उसका सौरभ उसी की अन्तस्थली में सम्पुट था।

किन्तु अब उसका सौरभ दूर-दूर तक सुरभित हो गया है।

उस सौरभ को फिर संकलित करके दिल में सम्पुटित करने का मंत्र भला कौन जानता है ?

मेरे दिल पर अब मेरा अधिकार नहीं रह गया है कि मैं उसे किसी एक को दे दूँ। अब तो मेरा दिल अनेक को दिया जा चुका है।

❋

३८

शुभ्रे ! किसी समय तुम्हारे इस कवि ने एक महाकाव्य की अवतरणिका अपने दिमाग में की ।

किन्तु, खेद ! महा खेद !! मेरी लापरवाही से वह महाकाव्य तुम्हारे कंकणों की ठेस से खण्डित हो गया ।

खण्डित होने पर वह गीतों के छोटे-छोटे टुकड़ों में बदल गया और तुम्हारे पैरों के पास गिर पड़ा ।

उस महाकाव्य के उन गुजरी हुई लड़ाइयों के आख्यान मुस्कराती हुई लहरों द्वारा फेंके जाते तथा आँसुओं से सींचे जाते हुए डूब गये ।

हृदयेश्वरि ! इस क्षति को तुम्हें अवश्य पूरा कर देना चाहिए ।

प्रिये ! यदि उस महाकाव्य द्वारा मौत के बाद धवल यश प्राप्त करने का मेरा अधिकार बरबाद हो गया है तो कम-से-कम उसे अमरत्व प्रदान कर दो ।

ऐसा हो जाने पर मैं न तो नुकसान का ही दुःख करूँगा और न तुम्हें ही दोषी ठहराऊँगा ।

*

३६

मैं सुबह का सारा समय फूलों की एक माला गूँथने में बिताता हूँ; किन्तु फूल खिसककर गिर जाते हैं।

तुम वहाँ चुपके से बैठकर अपनी भेदी आँखों से मेरी ओर टकटकी बाँधकर देख रही हो न?

साजिश रचनेवाली अपनी उन्हीं आँखों से ही क्यों न पूछो कि कौन दोषी था।

मैं एक गीत गाने की कोशिश करता हूँ, किन्तु विफल हो जाता हूँ।

एक छिपी हुई मुस्कराहट तुम्हारे होठों पर काँप रही है! मेरी विफलता का कारण उसी से क्यों न पूछो?

अपने मुस्कराते हुए होठों से सौगन्धपूर्वक पूछ क्यों न लो कि कमल के गर्भ की शहद की मक्खी की भाँति किस प्रकार मेरी आवाज सुनसान में लीन हो गयी थी।

सान्ध्य बेला है। फूलों के संकुचित होने का समय आ गया है।

मुझे अपने बगल में बैठने की आज्ञा दो और मेरे होठों को इजाजत दो कि वे अपना वह काम करें जो सिर्फ नक्षत्रों की धूमिल रोशनी में ही खामोशी के साथ होता है।

*

४०

जब मैं तुमसे विदा माँगने आता हूँ तो तुम्हारी आँखों में एक अविश्वासपूर्ण मुस्कराहट झलक उठती है।

मैं इतनी बार इसे कर चुका हूँ कि तुम्हारे अन्दर यह धारणा घर कर गयी है कि मैं जल्द ही फिर वापिस आऊँगा।

सच पूछो तो मुझे भी कुछ-कुछ ऐसा ही सन्देह हो रहा है।

क्योंकि वसन्त ऋतु भी तो बारम्बार आता है; पूर्ण चन्द्र भी तो बारम्बार आता है, और फूल भी तो बारम्बार सलज्ज अरुणाई लेकर रंजित हो उठते हैं और यह भी सम्भावना है कि मैं भी फिर लौट आने के लिए तुमसे विदा हो रहा हूँ।

किन्तु क्षण-भर तक यह मिथ्या भ्रम बना रहने दो; इसे शीघ्रतापूर्वक दूर मत करो।

जब यह कहूँ कि सदा के लिए तुमसे विदा होता हूँ तो तुम इसको ही सत्य समझ लो और अपनी आँखों की काली पुतलियों को पल-भर के लिए आँसुओं से भींग जाने दो।

और जब मैं फिर लौटकर आ जाऊँ तो व्यंग्यपूर्वक ठहाका लगा लेना।

❀

४१

मैं तुमसे कुछ गहन बातें कहना चाहता हूँ, किन्तु तुम्हारे हँसने के भय से मेरा साहस नहीं पड़ता।

तब मैं अपने ही ऊपर हँसता हूँ, और इस प्रकार अपना भेद छिन्न-भिन्न कर देता हूँ।

मैं अपनी व्यथा को स्वयं हल्का कर देता हूँ, इस डर से कि तुम वैसा न करो।

मैं तुमसे सच्ची बात कहना चाहता हूँ, किन्तु साहस नहीं होता, इस भय से कि तुमको विश्वास न हो।

इसलिए मैं उनको असत्य के छद्मवेष में प्रकट करता हूँ और अपने तात्पर्य से विपरीत बातें करता हूँ।

मैं अपनी मानसिक वेदना को इस भय से तिरस्कृत करता हूँ कि कहीं तुम वैसा न कर बैठो।

मैं तुम्हारे प्रति अपने आदरसूचक शब्दों का प्रयोग करना चाहता हूँ, किन्तु मेरा साहस नहीं पड़ता, इस भय से कि कहीं तुम भी वैसी ही बातें न मुझसे कह बैठो।

यही कारण है कि मैं तुम्हारे प्रति कठोर शब्दों का प्रयोग कर अपनी हृदयहीनता पर फूले नहीं समाता हूँ।

इस डर से कि शायद तुमको वेदना का अनुभव ही न हो, मैं तुमको वेदना पहुँचाता हूँ।

मेरी इच्छा तुम्हारे समीप मौनव्रत धारण कर बैठने की है, किन्तु इसलिए साहस नहीं होता कि कदाचित् मेरा कलेजा मुँह को न आ जाय।

इसीलिए मैं बेवकूफों की तरह बक-बक करके शब्दों के आडम्बर में अपना दिल छिपाये रखता हूँ।

मैं अपने दुःख के साथ इसलिए अपव्यवहार करता हूँ कि शायद तुम ऐसा न करो।

मेरी इच्छा तुम्हारे समीप से उठ जाने की होती है, किन्तु इसलिए साहस नहीं पड़ता कि कदाचित् मेरा कायरपन तुम पर प्रकट न हो जाय।

अतः मैं सगर्व मस्तक ऊँचा उठाकर तुम्हारे सामने आता हूँ।

और तुम्हारी कँटीली चितवन से निरन्तर बिंधते रहने के कारण मेरी पीड़ा हमेशा ताजी बनी रहती।

❀

४२

अरे, मदमत्त पागल !

यदि तू लात मारकर अपने सारे दरवाजे खोल दे और आम लोगों के सामने मूर्खता करे ;

यदि तू रात में अपना खजाना खोलकर बैठने की धृष्टता करे और बुद्धिमत्ता का अपमान करे ;

यदि तू अजीबो-ग़रीब राह पर भटकता फिरे तथा फजूल चीजों के साथ खेल करे ;

बुद्धिमत्ता तथा सतर्कता की परवाह न करे ;

यदि तू तूफान के सामने अपनी किश्ती का पाल खोल दे और उसका पतवार तोड़ फेंके ;

तब मैं तेरा साथ दूँ, और पागल होकर मैं भी दुर्गति को पहुँच जाऊँ, कामरेड।

सदाचारी एवं चतुर पड़ोसियों के साथ मैं अनेक रात तथा दिन नष्ट कर चुका हूँ।

अधिक जानकारी ने मेरे बाल सफेद कर दिये हैं और लगातार इन्तजार करने से मेरी नजर धुँधली हो गयी है।

मैंने तरह-तरह की चीजों के टुकड़े बरसों से एकत्रित कर रखे हैं।

उनको चकनाचूर कर दो, कुचल दो, चारों तरफ फेंक दो!

क्योंकि यह बात मुझे अच्छी तरह मालूम है कि पागल होकर दुर्गति को पहुँच जाना ही बुद्धिमत्ता की चरम बिन्दु है।

टेढ़े-मेढ़े धर्म के आचारों को दूर करके मुझे पथ-भ्रष्ट हो जाने दो।

पागलपन के झोंके से मुझे अपना जी बहला लेने दो।

इस दुनिया में कार्यपरायण, प्रवीण, प्रयोजनहीन तथा योग पुरुषों की कमी नहीं है।

इसमें अनेक तो आसानी से प्रथम श्रेणी की पंक्ति में खड़े किये जा सकते हैं, बहुतेरे तो द्वितीय श्रेणी के योग्य हैं।

मुझे मूर्ख ही रहने दो—और उनको उन्नतिशील होने दो!

क्योंकि सब कार्यों का अन्तिम परिणाम दुर्गति को प्राप्त हो जाना ही है।

इसी पल मैं भले आदमियों की श्रेणी के अपने सारे अधिकार छोड़ने की सौगन्ध खाता हूँ।

मैं अपनी विवेकशीलता को भी तिलांजलि देता हूँ।

मैं अपना स्मृति-पात्र चकनाचूर कर डालूँगा और अपनी आँसुओं की आखिरी बूँदें भी पोंछ डालूँगा।

मदिरा के लाल फेन से मैं अपनी हँसी को परिष्कृत करूँगा।

सभ्यता तथा सदाचार के चिह्न भी इसी उपलक्ष में मिटा डालूँगा।

पुनीत व्रत लेता हूँ कि मैं पागल होकर दुर्गति को प्राप्त होऊँगा तथा सदा निरुपयोगी बना रहूँगा।

❀

४३

नहीं, मेरे मित्रो ! नहीं, मैं कदापि तपस्वी न बनूँगा— तुम चाहे जितना भी कहो।

यदि वह मेरे साथ तपस्या-व्रत नहीं लेगी तो मैं कदापि तपस्वी न बनूँगा।

मैंने दृढ़तापूर्वक यह निश्चय किया है कि यदि मुझे घनी छाया तथा साथ में तपस्या करनेवाली नहीं मिलेगी तो मैं कदापि तपस्वी न बनूँगा।

नहीं, मेरे मित्रो नहीं, यदि जंगल की सघन छाया में मुझे किसी के हँसने की आवाज़ न सुनायी देगी, यदि किसी की केसरिया रंग की साड़ी हवा में पल्लवित न होगी, यदि सुमधुर शब्दों द्वारा वहाँ की नीरवता अत्यधिक घनीभूत न होगी तो मैं विजनवन-प्रान्त में कदापि न रहूँगा।

मैं कदापि तपस्वी न बनूँगा।

❀

४४

हे महात्मनम्! हम दोनों गुनाहगारों को माफ करो। आज बसन्ती हवा मदहोश होकर बह रही है। वह धूल तथा सूखी पत्तियों को उड़ा रही है और उनके साथ आपके उपदेश भी खो गये हैं।

जिन्दगी को माया मत बताइये।

क्योंकि हमने मौत से समझौता कर लिया है और कतिपय वास-युक्ति क्षण के लिए हम दोनों अजर-अमर हो गये हैं।

यदि बादशाह की सारी फौज आकर हम दोनों पर जोरों के साथ आक्रमण करे तो भी हम विषाद के साथ मस्तक हिलाकर यही शब्द निकालेंगे—भाइयो! तुम हमारी स्थिरता भंग कर रहे हो। यदि तुमको तुमुल खेद करना है तो जाओ,—अपने हथियार किसी दूसरी जगह जाकर खड़खड़ाओ, क्योंकि कुछ चलायमान घड़ियों के लिए ही हमें अमरत्व मिला है।

यदि मित्रगण आकर घेर लेंगे तो भी हम नम्रता के साथ यह कहते हुए उनका अभिवादन करेंगे कि:—

"आपकी यह असामान्य दया हमारे लिए अत्यन्त कष्टदायक है। इस अनन्त आकाश में स्थान का बड़ा-ही

अभाव है, क्योंकि मौसमेबहार में तो यहाँ फूल ही फूल नजर आते हैं और भीड़भाड़ के कारण शहद की मक्खियों के पर परस्पर रगड़ खाने लगते हैं।

"हमारी यह बैकुण्ठपुरी अत्यन्त सँकरी है जहाँ पर सिर्फ हम ही दोनों रहते हैं।"

❋

४५

जिन मेहमानों को जरूर ही जाना है, उन्हें बिदाकर उनके पद-चिह्नों को मिटा दो।

जो चीजें आसान, साधारण तथा समीपी हैं, उन्हीं को सप्रेम अपने दिल से लगाओ।

आज उन अस्तित्वहीनों का त्योहार है जिन्हें अपनी मौत का पता नहीं है।

पानी की लहरों पर पड़नेवाली क्षणिक आभा की तरह अपनी हँसी को एक निरर्थक विनोद ही बना रहने दो।

किसी पत्ते पर पड़े हुए ओस की बूँदों की तरह अपनी जिन्दगी को समय की परिधि पर धीरे-धीरे नाचने दो।

अपनी रुकती हुई स्थायी तानों को झंकृत करो।

❋

४६

तुमने मुझे छोड़कर अपना रास्ता लिया।

मैं सोचता था कि अपने दिल में तुम्हारी प्रतिमा की स्थापना करके जिन्दगी-भर तुम्हारा शोक मनाऊँ।

लेकिन, हायरे बदकिस्मती! समय कम रह गया है।

प्रत्येक वर्ष की क्षीणता के साथ मेरी जवानी भी क्षीण होती जा रही है, मौसमेबहार के दिन भागे जा रहे हैं, अनुभवी मनुष्य कहते हैं कि जिन्दगी कमल के पत्तों पर पड़े हिमकण के समान क्षणभंगुर है।

तो क्या इन सबका परित्याग कर मैं उसकी राह देखूँ, जिसने बेरहमी के साथ मुझसे अपना मुँह मोड़ लिया है?

ऐसा करना असंयत तथा मूर्खता होगी, क्योंकि समय बहुत ही कम है।

अस्तु, प्यारी बरसात की रातें! तड़तड़ाती हुई मेरे पास आओ; मेरे सुनहले हेमन्त मुस्कराओ; निश्चिन्त ग्रीष्म! आकर अपना मधुर चुम्बन सब जगह बिखेर दो!

आओ, तुम सब आओ!

मेरे प्यारो ! तुम्हें नश्वरता का ज्ञान तो जरूर होगा। क्या उस व्यक्ति के लिए अपना दिल टुकड़े-टुकड़े करना बुद्धिमानी है जो स्वयं अपना दिल लेकर भाग गयी है ?

और, समय भी तो कम रह गया है।

एक कोने में बैठकर गीतों में यह लिखना कि—"तुम मेरे दिल की दुनिया हो"—बहुत ही मधुर है।

कसक को अपने दिल से लगाये रखना और सान्त्वना न रखने का पक्का इरादा करना भी बहादुरी है।

लेकिन,—एक नया चेहरा बाहर से झाँक रहा है और अपनी रहस्य-भरी नजर मेरी ओर लगा रहा है।

मैं अपनी वेदना-भरी रागिनी बदलने तथा आँसू पोछने में असमर्थ हूँ।

क्योंकि समय कम रह गया है।

❀

४७

यदि तुम यही चाहती हो तो मैं अपना गीत बन्द किये देता हूँ।

यदि मेरे दृष्टिपात करने से तुम्हारा दिल धड़कने लगता है तो मैं अपनी नजर हटाये लेता हूँ।

यदि टहलते समय मुझे देखकर तुम चौंक पड़ती हो, तो यह देखो, मैं तुम्हारे सामने से हटकर दूसरा रास्ता पकड़ता हूँ।

यदि मेरे कारण फूलों की माला गूँथने में तुम्हे बाधा पड़ती है तो मैं तुम्हारे सुनसान बगीचे से दूर ही रहूँगा।

यदि मेरे ही कारण नदी का जल चंचल तथा वीभत्स रूप बना लेता है तो भविष्य में मैं तुम्हारे किनारे से अपनी नाव नहीं खेऊँगा।

*

४८

शुभ्रे! मुझे अपने मिठास के बन्धन से छुटकारा दे दो। मुझे चुम्बनों का मादक प्याला अधिक नहीं चाहिये।

धूप-दीप के इस तीव्र आमोद से मेरा दिल घुँटा जा रहा है।

कृपया दरवाजा खोल दो और सुबह की रोशनी अन्दर आने दो।

तुम्हारे प्रगाढ़ आलिंगन ने तो मुझे तुममें लवलीन कर दिया है।

हे शुभ्रे! तुम अपनी मोहिनी जादू से मुक्त कर दो। मेरा पुरुषत्व लौटा दो ताकि मैं अपना आजाद दिल तुम्हें दे सकूँ।

❀

४९

मैं उसका हाथ पकड़कर उसे अपने दिल से लगा लेता हूँ।

उसकी खूबसूरती से अपनी बाहों को भर लेने की मेरी इच्छा होती है। चुम्बनों द्वारा उसकी बसन्ती

मुस्कान का मैं अपहरण करना चाहता हूँ और उसकी गहरी श्यामल चितवनों को जी भरकर पीना चाहता हूँ।

आह! किन्तु यह सब हैं कहाँ? आसमान के नीलेपन को निचोड़ने के लिए भला किसमें सामर्थ्य है?

मैं उसकी खूबसूरती पकड़ने की कोशिश करता हूँ। वह मुझसे छूटकर भाग जाती है और उसका सिर्फ पार्थिव शरीर ही मेरे हाथ में रह जाता है।

थककर मैं फिर लौट आता हूँ।

वह फूल जो सिर्फ देवता ही योग्य है, भला इस पार्थिव शरीर को कैसे मिल सकता है?

५०

मधुरे! तुमसे मिलने के लिए मेरा दिल दिन-रात छटपटाया करता है—उस मिलन के लिए जो सबको चट कर जानेवाली मौत के समान है।

तूफान की तरह तुम मुझे उड़ा फेंको, मेरा सब कुछ ले लो, जबरदस्ती मेरी नींद उचटाकर मेरे सपने की दौलत भी लूट लो, मेरी दुनिया तक मुझसे छीन लो!

उस घोर उपप्लव में, आत्मा के नंगेपन में आओ। हम दोनों ही यूसुफ जैसी खूबसूरती में लीन हो जायँ।

किन्तु,—अफसोस मेरी झूठी तमन्ना! तन्मयता की यह आशा, हे भगवान् तुम्हीं में निहित है।

❀

५१

अच्छा, तो अब अपना आखिरी गीत खतम करो और चलो।

जब रात नहीं रही, तो इस रात को भुला दो।

मैं किसको आलिंगन करने की कोशिश कर रहा हूँ? भला सपने भी कभी पकड़े गये हैं!

मेरे आकुल हाथ निरे शून्य को ही मेरे दिल पर रखकर दुःखित कर रहे हैं और इसी कारण मेरे दिल में असह्य कसक पैदा हो रही है।

❀

५२

लैम्प क्यों बुझ गया ?

मैंने अपने अंचल के द्वारा पवन के झोंके से उसकी रक्षा की थी और शायद वह इसी से बुझ गया।

फूल क्यों कुम्हला गया ?

प्रेम की उत्कंठा में मैंने उसे अपने दिल से लगा लिया था और कदाचित् इसी से वह मुरझा गया।

सोता क्यों सूख गया ?

मैंने अपने लिए उसका बाँध बाँधा था, इसी से वह सूख गया !

और, वीणा के तार क्यों टूट गये ?

मैंने उसकी शक्ति के बाहर उसमें से एक झंकार निकालने की कोशिश की थी। इसी से उसके तार टूट गये।

❀

५३

मेरी ओर अपनी दृष्टि करके तुम क्यों लज्जित कर रही हो ?

मैं भिखारी बन करके तो आया नहीं हूँ।

मैं तो सिर्फ घड़ी भर ही तुम्हारे बगीचे के सीमान्त झाड़ी के पास आँगन के बाहर खड़ा था।

मेरी ओर अपनी दृष्टि करके तुम क्यों लज्जित कर रही हो ?

मैंने तुम्हारे बगीचे से गुलाब ही तोड़ा है और न फल ही।

मैंने तो रास्ते के एक ओर पनाह लिया था जहाँ पर किसी भी राहगीर को खड़े रहने का पूर्ण अधिकार है !

मैंने गुलाब का एक फूल भी तो नहीं तोड़ा।

हाँ, मेरे पैर जरूर थक गये थे, और सहसा पानी बरसने लगा था।

झूमते हुए बाँसों के बीच से हवा साँय-साँय करती हुई चल रही थी।

लड़ाई के हारे हुए सैनिकों की तरह बादल आसमान में भागे जा रहे थे।

मेरे पैर बहुत ही थके हुए थे।

मैं नहीं जानता कि तुम्हारे दिल में हमारे प्रति क्या विचार उत्पन्न हुए और न मुझे यह ही ज्ञात है कि तुम द्वार पर खड़ी किसकी प्रतीक्षा कर रही थी।

प्रतीक्षा में रत तुम्हारी आँखों पर बिजली अवश्य चकाचौंध पैदा कर रही थी।

भला यह मुझे कैसे मालूम हो सकता था कि तुम अँधेरे में खड़ी-खड़ी मुझे देख रही थी।

मैं नहीं जानता कि तुमने मेरे सम्बन्ध में क्या-क्या सोचा।

दिन का फाटक बन्द हो गया है, और क्षण भर के लिए पानी का बरसना भी बन्द है।

मैं पेड़ की छाया के नीचे का अपना घास-फूस का आसन छोड़ रहा हूँ, जो तुम्हारे बगीचे के सीमान्त में है।

अब रात ने अँधेरी चादर ओढ़ ली है। अपना दरवाजा बन्द कर लो। मैं जाता हूँ।

❋

५४

काफी रात बीत गयी है, बाजार उड़स गया है, अब तुम डोलची लिए तेजी से कहाँ जा रही हो ?

और सब तो बाजार करके लौट आयी हैं; गाँव के पेड़ों के झुरमुट से चाँद झाँक रहा है।

किश्ती के पुकारनेवालों की आवाज की गूँज काले जलधारा को पार करके उस सुदूरवर्ती दलदल तक सुनायी देती है जहाँ पर बनैले बत्तख बसेरा लेते हैं।

बाजार उड़स जाने पर हाथ में डोलची लिए तुम तेजी से अब कहाँ जा रही हो ?

समस्त अवनीतल निद्रादेवी की गोद में है।

कौवों का रैन-बसेरा भी खामोश हो गया है, और बाँसों की खड़खड़ाहट भी अब बन्द हो गयी है।

खेतों से घर वापिस हुए मजदूर आँगन में अपनी-अपनी चटाइयाँ बिछा रहे हैं।

पैंठ उठ जाने पर हाथ में डोलची लिए तुम तेजी से अब कहाँ जा रही हो ?

✻

५५

जिस समय तुम रवाना हुए, तब दोपहर का समय था।

उस समय चिलचिलाती धूप थी।

जिस समय तुम गये मैं अपने काम-काज से फुरसत पाकर छज्जे पर अकेली बैठी थी।

पवनदेव के झोंके में खेतों की भीनी-भीनी सुगन्धि थी।

पंडुकी अथकरूप से झाड़ी में बोल रही थी, और मेरे कमरे में एक शहद की मक्खी चक्कर लगाती हुई दूर के खेतों के समाचार गुनगुना रही थी।

दोपहर की तपिश में सारा गाँव सो रहा था। राजमार्ग पर कोई चिड़िया का पूत भी नहीं दिखायी पड़ता था।

कभी-कभी पत्तों की खड़खड़ाहट सुनायी पड़ती थी और फिर निस्तब्धता छा जाती थी।

मैं नीले आकाश की ओर टकटकी बाँधकर देख रही थी और नीले आकाश पर उस नाम के अक्षर अंकित कर रही थी जो मुझे दोपहर की गरमी में मालूम हुआ था।

मैं अपना बाल सँवारना भूल गयी थी। आलस्य से भरी हुई मन्द हवा उन बालों को उड़ा-उड़ाकर मेरे गालों पर डालती और खेला करती।

सघन किनारों के नीचे नदी शान्तिपूर्वक बह रही थी।

अलसाये हुए सफेद बादल निश्चल हो रहे थे।

मैं अपना बाल सँवारना भूल गयी थी।

जिस समय तुम रवाना हुए, तब दोपहर का समय था।

सड़क की धूल में तपिश थी और खेत हाँफते हुए-से लगते थे।

सघन पत्तों के झुरमुट में से पंडुकी बोल रही थी।

जिस समय तुम प्रस्थान किये, मैं अपने छज्जे पर अकेली ही तो बैठी थी।

❀

५६

अनेक प्रकार के घरेलू कामों में व्यस्त अन्य साधारण स्त्रियों में से मैं भी एक थी।

फिर तुम मुझे ही मेरे सामान्य जीवन के शीतल आश्रय से दूर क्यों खींच लाये?

अप्रदर्शित प्रेम बड़ा ही पुनीत होता है। छिपे हुए दिलों के घुप अन्धेरे में तो यह हीरे की तरह चमकता है; किन्तु दिन की रोशनी में यह अन्धकार की चादर ओढ़े रहता है।

आह! तुमने तो मेरे दिल का पर्दा छेदकर मेरे निरीह प्रेम को मैदान में ला खड़ा कर दिया। तुमने उसकी स्निग्ध-स्थली को नष्ट कर डाला। वह (प्रेम) किसी समय सुखपूर्वक वहाँ पर निवास किया करता था।

अन्य स्त्रियाँ अब भी सदा की भाँति बनी हैं।

किसी ने उनके दिल का थाह नहीं लगा पाया है। उनका रहस्य तो स्वयं उनके लिए पहेली बना हुआ है।

वे स्त्रियाँ अब भी हँसती, रोती, परस्पर बातचीत करती हैं तथा अपना घरेलू काम करती हैं। नियमित

रूप से वे मन्दिर जाती हैं, अपने दीये जलाती हैं, और नदी से जल लाती हैं।

मुझे आशा थी कि मेरा प्रेम निराश्रयता के लाज से बच जायगा, किन्तु अफसोस! तुमने तो मुँह ही फेर लिया।

हाँ, तुम्हारा रास्ता तो खुला पड़ा है; किन्तु अफसोस! तुमने तो मेरे सारे मार्ग अवरुद्ध कर दिये और मुझे नंगी अवस्था में इस दुनिया के सामने खड़ा कर दिया, जिसकी आँखें टकटकी बाँधकर मेरी ओर देख रही हैं।

❀

५७

विश्व मैंने तेरा एक पुष्प तोड़ लिया।

मैंने आवेग के साथ उसे अपने सीने से लगा लिया, किन्तु उसका काँटा मुझे चुभ गया।

जब दिन का अवसान हुआ और चारों ओर अन्धेरा छा गया, तब मुझे पता लगा कि पुष्प ही कुम्हला गया है। किन्तु—उसकी वेदना अब भी ज्यों-की-त्यों है।

विश्व ! सुगन्धित तथा मनमोहक और भी तो सुमन तुझमें लगेंगे।

किन्तु फूल इकत्रित करने की मेरी उम्र तो अब बीत गयी है और यद्यपि इस घुप अन्धकार में मेरे पास मेरा वह गुलाब तो नहीं बचा; किन्तु हाँ, उसके काँटे की वेदना अब भी शेष है।

❀

५८

प्रातःकाल था। फूलों के बगीचे में एक अन्धी बालिका सुमनों की एक माला कमल के पत्ते में रखकर मुझे देने आयी।

मैंने उस माला को पहन तो लिया, किन्तु मेरी आँखें गीली हो उठीं।

मैंने उसका चुम्बन करते हुए कहा—"तुम इन सुमनों की ही तरह बिना आँख वाली हो।"

"तुम स्वयं नहीं जानती कि तुम्हारा यह उपहार कितना सुन्दर है।"

❀

५९

ऐ रमणी! तुम सिर्फ ईश्वर की ही रचना नहीं, वरन् मनुष्यों द्वारा भी सुचारु रूप से बनायी जाती हो। वे तुमको हमेशा सुन्दरता दान करते रहते हैं।

कवि लोग तो तुम्हारे लिए उपमालंकारों का सुन्दर वितान बनाते रहते हैं, और चित्रकार हमेशा नूतन अमरत्व प्रदान करते हैं।

समुद्र मोती प्रदान करता है, पृथ्वी हेम-दान देती है और ग्रीष्म ऋतु की वाटिकाएँ तुम्हारे शृंगार के लिए अपने फूल तुम्हें अनमोल बनाने के लिए प्रदान करती रहती हैं।

मनुष्यों की कामनाओं ने तो तुम्हारी जवानी पर अपना यश तक अर्पण कर दी है।

हे भामिनी! तुम आधी स्त्री हो तथा आधी स्वप्न हो।

❀

६०

हे पाषाण-खचित सौन्दर्य ! जीवन के मीड़-युक्ति एवं खौफनाक स्रोत के बीच तू मूक, एकाकी और सभी से दूर स्थित है।

महान् समय तेरे पैरों के नजदीक मुग्ध बैठा हुआ मन्द स्वर में कहता है:—

"मुझसे बोलो, मेरी प्रिये ! बोलो न, मेरी वधू !"

किन्तु, हे निश्चल सौन्दर्य ! तो भी तेरी वाणी पत्थर में ही बन्द रहती है।

❀

६१

शान्त हो मेरे दिल, शान्त हो ! वियोगकाल को मधुर रहने दो।

इसको मौत न समझकर अन्तिम सम्पूर्णता समझो।

द्रवित होकर प्रेम को स्मृति के रूप में तथा वेदना को रागिनी के रूप में बदल जाने दो।

नीले आकाश में जिन्दगी भर उड़ते रहने का अन्त आज तुम अपने घोसले पर आराम के साथ पंख सिकोड़ कर करो।

अपने हाथों के अंतिम स्पर्श को रात के फूलों की भाँति मुलायम बनाओ।

सुन्दर अन्त! पल भर शान्त खड़े रहो, और अपने अन्तिम शब्दों को खामोशी के साथ कहो।

मैं सिर झुकाकर तुम्हारा अभिवादन करता हूँ और अपने हाथों को ऊँचा उठाकर तुम्हारा पथ आलोकित करता हूँ।

६२

स्वप्न के अस्पष्ट मार्ग से मैं अपनी उस प्रेमिका की तलाश में गया जो पूर्व जन्म में मेरी थी।

उसका घर एक सुनसान पथ के अन्त पर था।

शाम की हवा में उसका पालतू मयूर अपने अड्डे पर बैठा हुआ झपकी ले रहा था, और कबूतर अपने-अपने दरबे में खामोश बैठे थे।

अपने हाथ का लैम्प दरवाजा के पार्श्व-भाग में रखकर वह मेरे सामने खड़ी हो गयी।

उसने अपनी बड़ी-बड़ी आँखें मेरी ओर उठाकर पूछा—"अभिन्न हृदय, सकुशल तो हो न ?"

मैंने उत्तर देने का भरसक प्रयत्न किया, किन्तु हम दोनों अपनी भाषा को भुला चुके थे।

मैं लगातार याद करता रहा, किन्तु हमें अपने नाम ही खयाल में न आये।

उसकी आँखों में आँसू छलक उठे। उसने अपनी दाहिनी भुजा मेरी ओर उठा दी। मेरे हाथ काँप रहे थे। मैंने अपने काँपते हाथों में उसे लेकर खामोश खड़ा रहा।

शाम की शीतल-मन्द बयार में हमारे दीये झिलमिला कर निलमिला उठे थे।

❋

६३

राहगीर तुम अवश्य ही जाओगे ?

सुनसान रात है तथा घुप अन्धकार मानो बेहोश होकर वन-प्रदेश पर गिर रहा है।

हमारे छज्जे पर लैम्प अब भी तेज रोशनी फैला रहे हैं, फूलों में अभी ताजगी है तथा कमनीय दोनों आँखें अब भी जागरण कर रही हैं।

क्या तुमसे बिछुड़ने का समय आ गया ?

राहगीर ! क्या तुम्हारा जाना नितान्त जरूरी है ?

अपने विनीत हाथों द्वारा तुम्हारे चरणों का अवगुण्ठन नहीं किया है।

तुम्हारे हेतु किवाड़ खुले हुए हैं। तुम्हारा घोड़ा अपने साज-बाज से द्वार पर खड़ा है। यदि हमने तुमको रोकने की कोशिश भी की है तो सिर्फ अपने गीतों द्वारा ही; अपनी दुःखिया आँखों ही से।

राहगीर ! हम तुमको रोकने में असमर्थ हैं। हमारे पास तो सिर्फ आँसू ही हैं।

तुम्हारी आँखों से यह कैसी चिनगारी निकल रही है ?

तुममें यह कैसी बेकली, बेकरारी तथा बेचैनी है और

तुम्हारी शिराओं में यह कैसा उच्छृंखल लहू प्लावित हो रहा है।

अन्धकार-युक्त नेपथ्य से तुम्हें कौन बुला रहा है ?

आसमान के सितारों में तुमने कौन-सा विभीषिका-युक्त मंत्र देखा है कि विचित्र रात का उदास अन्धेरा तुम्हारे दिल में सहसा घुस गया है।

यदि तुमको आनन्द-युक्त संयोग की अभिलाषा नहीं है—सिर्फ शान्ति लाभ की आकांक्षा है तो हे राहगीर! लो, हम सब लैम्प गुल कर देते हैं और वीणा का स्वर भी रोक देते हैं।

पत्तों की खड़खड़ाहट वाले अन्धकार में हम दोनों खामोश बैठेंगे और परिश्रान्त चन्द्रमा हमारे वातायन पर अपना धुँधला पीला प्रकाश डालेगा।

राहगीर! अर्द्धरात्रि के हृदय से निकलकर किस अर्द्धनिद्रित "स्प्रिट" ने तुमको स्पर्श कर दिया है ?

❋

६४

रास्ते की तपी हुई धूल पर तो मैंने अपना सारा दिन गँवा दिया।

जब मैंने शाम की शीतलता में सराय का दरवाजा खटखटाया तो क्या देखता हूँ कि सराय सुनसान तथा भग्न पड़ी हुई है।

एक खौफनाक अश्वत्थ पेड़ की भूखी व वज्रवत् जड़ें दाँत निकाले दीवाल की दरारों में घुस गयी हैं।

किसी समय मुसाफिर यहाँ आकर अपने थके-माँदे पैर धोया करते थे।

वे इसके प्रकोट में सायंकालीन चन्द्रमा की धीमी रोशनी में अपनी चटाइयाँ बिछाकर बैठते तथा अजीबोगरीब देशों के बारे में बातचीत किया करते।

सुबह वे ताजगी एवं स्फूर्ति लेकर उठते। उस समय पक्षीगण अपने मधुर संगीत से उनको खुश करते तथा स्नेही सुमन उनका स्वागत किया करते।

किन्तु, जब मैं यहाँ आया, उस समय एक लैम्प भी मेरी इन्तजार में नहीं जल रहा था।

प्राचीरों पर से कोई-कोई पुरानी एवं भूली दीप-शिखाओं की काली रेखाएँ ही मेरी ओर दृष्टिविहीनों की तरह देख रही थीं।

सूखे तालाब के किनारे की झाड़ियों में जुगनूँ अपने दीये जला रहे थे और झुके हुए बाँस घास पर अपनी छाया डाल रहे थे।

अफसोस! अपनी जिन्दगी के दिन बिता चुकने पर भी मैं यहाँ आज किसी का मेहमान नहीं हूँ।

अभी तो बड़ी लम्बी रात मुझे काटनी है, और मैं अब बहुत थक गया हूँ।

*

६५

क्या आपने मुझे फिर बुलाया?

दिन का अवसान हो चुका है। थकान, मुहब्बत की ख्वाहिश रखनेवाली बाहों की तरह मुझसे लिपट-सी रही है।

क्या आप मुझे पुकार रही हैं?

मैं अपना सारा दिन तो आपको दे ही चुका था, निर्दयी स्वामिनी! क्या मेरा रात का समय भी लेना चाहती है?

कभी-न-कभी हर चीज का अन्त होता ही है, और खासकर रात के सुनसान समय का तो हरेक आदमी अधिकारी होता है।

रात की नीरवता में मुझे घायल करने की क्या आवश्यकता थी?

क्या आपके दरवाजा पर सान्ध्य बेला का दुन्दुभि-गीत में भी कोई अभाव नहीं है? क्या आपके इन निर्मोही महलों पर खामोश नक्षत्र-मंडली नील गगन में आरोहण नहीं करती?

क्या आपके बगीचे के फूल धरती पर गिरकर कोमल मौत को गले नहीं लगाते?

क्या मुझे पुकारना बहुत जरूरी है?

अच्छा, तो फिर प्रेम की भूखी इन आँखों को व्यर्थ ही प्रतीक्षा करने दो तथा आँसू बहाने दो।

दीये को सुनसान घर में ही जलने दो।

किश्ती पर थके-मांदे कामगारों को अपने-अपने घर जाने दो।

मैं अपना स्वप्नानुभव छोड़ करके आपकी पुकार पर आता हूँ।

❋

६६

एक भटकता हुआ पागल आदमी पारस पत्थर की तलाश में था। उसके धूल-धूसरित ताम्रवर्ण बाल उलझकर जटिलता को प्राप्त हो गये। छाया की तरह उसका गात अत्यन्त कमजोर था। उसके होंठ भी उसके दिल के बन्द दरवाज़ों की भाँति बन्द थे, और जोड़ा की तलाश करनेवाले जुगनूँ की तरह उसकी आँखें उद्दीप्त हो रही थीं।

अथाह समुद्र उसके सामने गर्जन कर रहा था।

बड़ी-बड़ी लहरें अविश्रान्तरूप से अपने भीतर के खजानों की बात गर्जन-तर्जन कर सुना रही थीं।

सम्भव है कि उस उन्मत्त की सारी आशाओं का अन्त हो गया हो, किन्तु तो भी, यह इसलिये दम नहीं लेता था कि उसकी जिज्ञासा अब उसके जीवन का एक भाग बन गयी थी।

जिस प्रकार महासागर अपनी तुमुल लहर रूपी भुजाएँ किसी चीज को लेने के लिए ऊपर को उठाता है, नक्षत्रगण बराबर परिक्रमा करके उस उद्देश्य को हासिल करने की कोशिश करते हैं, जिसकी प्राप्ति असम्भव है,—ठीक उसी प्रकार समुद्र के सुनसान साहिल पर, वह

उन्मत्त आदमी अपने धूल-धूसरित ताम्रवर्ण बालों सहित पारस पत्थर की तलाश में लगातार घूमता रहा।

एक दिन एक देहाती लड़के ने आकर उससे पूछा—"कहो, यह सोने की जंजीर तुमको कहाँ मिली?"

पागल चौंककर बोल उठा—"जो जंजीर किसी समय लोहे की थी, आज वही सुवर्ण की हो गयी है। यह एक स्वप्न नहीं है, अपितु वास्तविक बात है!"

पागल ने दुःख से अपना ललाट पीट लिया—कहाँ, अफसोस कहाँ, उसकी अज्ञानता में सफलता प्राप्त हो गयी थी।

कंकणों को उठा-उठाकर जंजीर से छुला लेना उस उन्मत्त आदमी का अभ्यास-सा पड़ गया था, और बिना देखे ही उनको दूर फेंक देता था। इस प्रकार उस उन्मत्त व्यक्ति ने पारस प्राप्त करके भी फिर उसे खो दिया।

दिवस का अवसान समीप था। गगन कुछ लोहित हो चला था।

दुर्बल, कमर झुकाये तथा उखड़े हुए पेड़ की तरह टूटे दिलवाला वह उन्मत्त आदमी, फिर उसी राह पर अपनी खोई चीज की तलाश में लौट पड़ा।

❀

६७

यद्यपि सान्ध्य वेला ने धीरे-धीरे आकर सब गीतों के बन्द हो जाने का 'सिगनल' दे दिया था ;

यद्यपि तुम्हारे साथी विश्राम के लिए चले गये हैं, और तुम थक गये हो ;

यद्यपि रात का अन्धकार डरावना लग रहा है तथा आकाश के मुख पर एक पर्दा-सा पड़ा हुआ है ;

किन्तु पक्षी ! मेरे पक्षी ! मेरी बात सुनो तथा अपने पंख मत मोड़ो।

यह जंगल की पत्तियों का अन्धेरा नहीं है, बल्कि यह तो काले साँप के समान लम्बा-चौड़ा होनेवाला समुद्र है।

यह विकसित जुही का नृत्य नहीं है, प्रत्युत् यह तो धवल फेन है।

आह ! अब कहाँ तो प्रकाश-युक्त हरा साहिल है, और कहाँ तुम्हारा घोंसला है ?

पक्षी ! मेरे पक्षी ! मेरा कहना सुनो और अपने पंख मत मोड़ो।

तुम्हारे मार्ग में सुनसान रात का सामना है। सुबह

की रोशनी तो उस घने पार्वतीय प्रदेशों के पीछे पड़ी हुई सो रही है।

सितारे साँस रोके हुए घड़ियाँ गिन रहे हैं, और मन्द चन्द्रमा गम्भीर रात को धीरे-धीरे पार कर रहा है।

पक्षी! मेरे पक्षी! अपने पंख अभी मत मोड़ो, मेरी बात मानो।

आशा तथा भय—इन दोनों में से तुम्हें कोई नहीं है। किसी का अस्फुट शब्द नहीं सुनायी पड़ता।

न तो कहीं तुम्हारा और ठिकाना है और न आराम करने का स्थान है।

तुम्हारे पास तो सिर्फ पंख हैं, और सामने अनन्त आकाश है।

पक्षी! मेरे पक्षी! अभी अपने पंख मत मोड़ो, मेरा कहना मान लो।

॰

६८

बन्धु! कोई हमेशा जीवित नहीं रहता और न कोई चीज ही टिकाऊ होती है। इसी को याद रखकर हमेशा खुश रहो।

सिर्फ हम लोगों का ही जीवन एक भारी बोझ नहीं है तथा हमारे ही सामने अनन्त यात्रा नहीं है।

किसी एक ही कवि को कोई पुरानी गीत नहीं गानी है।

फूल कुम्हलाकर सूखा ही करते हैं, किन्तु उनके धारण करने वालों को हमेशा शोक नहीं मनाना पड़ता।

बन्धु! इसी को याद रखकर हमेशा खुश रहो।

स्थायी विरामकाल किसी-न-किसी दिन सम्पूर्णता को संगीतमय अवश्य कर देगा।

सुनहरी छाया में विलीन होने के लिए जिन्दगी अवसान सन्ध्या की ओर झुकी जा रही है।

प्रेम किसी-न-किसी समय अवश्य ही गम उठाने तथा आँसुओं के स्वर्ग में ले जाये जाने के लिए अपनी क्रीड़ा से खींचकर बुलाया जायगा।

बन्धु! इसी को याद रखकर सदा प्रसन्न रहो।

पवन के झँकोरे से कहीं वे बर्बाद न हो जायँ, इस भय से हम लोग शीघ्र ही फूल इकट्ठित कर लेते हैं।

देर करने से अन्तर्धान हो जाने वाले चुम्बनों को तेजी से हासिल कर लेने से हमारे खून में तेजी आती है और आँखों की चमक तीव्र हो उठती है।

हमारी जिन्दगी उत्सुकता से भरी हुई है तथा हमारी आकांक्षाएँ उत्कट हैं, क्योंकि समय वियोग की घड़ी की सूचना हमको लगातार दे रहा है।

बन्धु ! इसी को याद रखकर हमेशा निर्द्वन्द्व रहो।

किसी चीज को आग्रहपूर्वक पकड़कर उसको फिर तोड़ फेंकने का हमारे पास अवकाश नहीं है।

समय की घड़ियाँ अपने सपनों को अंचलों की ओट में छिपाये हुए तेजी से बीती जा रही हैं।

जीवन अल्प होने के कारण प्रेम करने का अवसर कम है।

यदि इसमें केवल असह्यता होती तो यही जिन्दगी लम्बी जान पड़ती।

बन्धु ! इसी को याद कर सदा प्रसन्न रहो।

सदा हमारी जिन्दगी के द्रुत ताल पर नाचने के कारण खूबसूरती हमें बहुत ही भली लगती है।

ज्ञान बड़ा ही अनमोल है, क्योंकि उसे पूरा करने की कभी भी हमें फुरसत नहीं मिलेगी।

सारे काम अनन्त स्वर्ग में ही पूरे होते हैं।

किन्तु, इस धरती के माया-सुमन मौत द्वारा ही बहुत समय तक सरसब्ज रहते हैं।

बन्धु ! इसी को याद कर हमेशा निर्द्वन्द्व रहो।

❀

६९

मैं सोने के मृग की तलाश में हूँ।

मित्रो ! यह जानकर तुम भले ही हँसो, किन्तु वास्तव में तो बार-बार बचकर निकल भागनेवाली इस मरीचिका का ही पीछा कर रहा हूँ।

मैं पहाड़ों तथा घाटियों को पार करता-फिरता हूँ, मैं संज्ञाहीन देशों में घूमता-फिरता हूँ—सिर्फ इसीलिये कि मैं सोने के मृग की तलाश में हूँ।

तुम तो बाजार से अपनी-अपनी चीजें लेकर लौट भी आते हो, किन्तु पता नहीं कि कब तक तथा कहाँ इस घर-रहित हवा के मोहिनी मंत्र ने मुझे अधीन कर लिया।

मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं है, मैं अपना घर-द्वार बहुत पीछे छोड़ आया हूँ।

मैं पहाड़ों तथा घाटियों को पार करता फिरता हूँ, संज्ञाहीन देशों का भ्रमण करता हूँ—सिर्फ इसीलिये कि मैं सोने के मृग की तलाश में हूँ।

❀

७०

मुझे अपने बाल्य-काल का वह दिन याद है जब मैंने कागज़ की एक किश्ती बनाकर नाली में बहायी थी।

बरसात का मौसम था; मैं अकेला था; प्रसन्नतापूर्वक खेल रहा था।

मैंने कागज की एक छोटी-सी किश्ती बनाकर नाली में बहा दी।

सहसा गगन में काली घटाएँ घिर आयीं, ज़ोरों की हवा चलने लगी तथा मूसलाधार पानी बरने लगा।

गन्दे पानी की नदियाँ बह निकलीं जिससे मेरी बेचारी किश्ती डूब गयी।

मैंने सविषाद सोचा कि तूफान तथा वर्षा ने जान-बूझकर मेरी इस निर्द्वन्द्वता को बबाद करने नहीं आयी थी, बल्कि उनको मुझसे रश्क हो रहा था।

अब आज बरसात का मौसम बड़ा भारी पहाड़-जैसा लगता है, और मैं बैठा हुआ जिन्दगी के उन खेलों को याद कर रहा हूँ, जिनसे मैं हमेशा अपनी हार मानता आया हूं।

अपने इन विषादों के लिए मैं अपने भाग्य को ही कोसा करता था कि सहसा मुझे कागज की वह छोटी-सी किश्ती याद हो आयी, जो पनाले में डूब गयी थी।

७१

अभी दिन का अवसान नहीं हुआ है तथा मेला,—नदी किनारे पर का मेला अभी नहीं उठा है।

मुझे डर था कि मेरा सारा समय यों ही बर्बाद हो गया है, और मेरी बची मुद्रा भी भूल गयी है।

किन्तु नहीं, अभी मेरी जेब में कुछ-न-कुछ शेष है। मेरे भाग्य ने सभी कुछ नहीं छला है।

ख़रीद-बिक्री समाप्त हो गयी है।

आपसी लेन-देन भी तय हो चुका और अब घर वापिस जाने का समय हो चुका है।

किन्तु, द्वारपाल! क्या तुम अपना कर माँगते हो?

भयभीत मत होओ, मेरी जेब में अब भी कुछ शेष है। मेरे भाग्य ने सभी कुछ नहीं छला है।

हवा का समीरण समाप्त होने से आँधी की सम्भावना प्रतीत हो रही है और पश्चिम की ओर लटके हुए बादल भी कुछ भले नहीं हैं।

निश्चल जलराशि हवा की ही प्रतीक्षा में है।

मैं तारों की बारात आने के पहले ही नदी पार हो जाने के लिए आगे बढ़ा।

केवट! क्या तुम अपनी उतराई माँगते हो? अधीर मत होओ, मेरे पास अभी कुछ शेष है। भाग्य ने सब कुछ नहीं छला है।

मार्ग में पेड़ की छाया के नीचे भिखारी बैठा है। हाय! वह भी आशा लगाये मेरी ओर देख रहा है।

वह समझ रहा है कि मेरे पास धन का बाहुल्य है।

हाँ भाई! मेरे पास कुछ-न-कुछ शेष है। मेरे भाग्य ने सब कुछ नहीं छला है।

अन्धकार घनीभूत हो रहा है तथा पथ सुनसान हो चला है। पेड़ों की पत्तियों में जुगनूँ अपना प्रकाश कर रहे हैं।

अरे! यह तुम कौन हो, जो मेरे पीछे-पीछे चुपके-से चले आ रहे हो?

मैं भाँप गया! तुम मेरा कमाया धन लूट लेना चाहते हो? अच्छा आओ, मैं तुमको भी हतोत्साहित नहीं करूँगा, क्योंकि मेरे पास अभी कुछ-न-कुछ शेष है। मेरे भाग्य ने मुझसे सर्वस्व नहीं छीन लिया है।

अर्द्धरात्रि को मैं घर पहुँचा। मेरे दोनों हाथ रिक्त थे।

तुम्हारी आँखें व्याकुल तथा अनिद्रित थीं, और तुम शान्तिपूर्वक मेरी बाट देख रहे थे।

डरे हुए पक्षी की तरह तुम प्रेम के आवेग में मेरे दिल से लग गये।

मेरे भगवान्! मेरे पास अब भी पर्याप्त है। मेरे भाग्य ने मेरा सर्वस्व नहीं अपहरण कर लिया है।

॥

७२

कठिन प्रयास से मैंने एक देवालय निर्मित किया। उसमें दरवाजा अथवा खिड़की नहीं थी और उसकी दीवालें पाषाण-खण्डों से निर्मित हुई थीं।

मैंने सबको विस्मृत कर दिया, दुनिया से दूर रहने लगा और एकाग्रचित होकर स्थापित प्रतिमा की ओर देखने लगा।

उस देवालय के भीतर अन्धकार के कारण सदा रात ही बनी रहती थी और खुशबूदार तेल के दीये जला करते थे।

दशांग की धूम्र-शिखा ने मेरे दिल को जकड़ लिया।

मैं देवालय की प्राचीरों पर नाना प्रकार के चित्र तथा गोरखधन्धे की सामग्री विचित्र रेखाओं से खींचा करता।

मनुष्य की आकृति के फूलों, सपक्ष घोड़ों तथा साँपों के समान अवयवोंवाली स्त्रियों के चित्र खींचा करता।

उस देवालय में कहीं पर भी कोई ऐसा रास्ता नहीं था, जिसमें से चिड़ियों के मधुर गीत, पत्तियों की खड़खड़ाहट अथवा गाँव के कोलाहल उसके भीतर प्रवेश कर सकते।

उसके भीतर सिर्फ स्तोत्रपाठ की प्रतिध्वनि ही गूँजा करती थी।

मेरा दिमाग अग्नि-शिखा की भाँति निश्चल हो गया और मेरी इन्द्रियाँ आनन्द निमग्न हो गयीं।

मुझे समय के बीत जाने का कुछ पता नहीं चला था कि सहसा मेरे देवालय पर भयंकर वज्रपात हुआ और एक असह्य वेदना मेरे दिल में हो गयी।

दीये की रोशनी फीकी प्रतीत हो रही थी और प्राचीरों की चित्रकारी संकलबद्ध सपनों की तरह उस रोशनी में ऐसी निरर्थक दिखायी देने लगी मानों शर्म के कारण छिपना चाहती हो।

प्रतिमा की ओर नजर उठाने पर मैंने देखा कि वह मुस्करा रही थी तथा उसमें सजीवता आ गयी थी। मैंने जिसे रात को देवालय के अन्दर बन्दी कर रखा था, वह अपने पंख फैलाकर लुप्त हो गयी थी।

*

७३

हे मेरी धूलि-धूसरित माँ वसुन्धरे! अमित धनराशि तुम्हारी नहीं है।

तुम अपने सन्तानों की उदर-पूर्ति के लिए लगातार अथक प्रयास करती हो, किन्तु खाद्य-सामग्री अत्यन्त दुर्लभ हो गयी है।

हम लोगों के लिए तुम्हारा आनन्दोपहार कभी सम्पूर्ण नहीं हो पाता।

अपने बच्चों के लिए तुम जो खिलौने बनाती हो, वे भी बहुत कमज़ोर हैं।

तुम मेरी हर प्रकार की भूख नहीं मिटा सकती हो, तो क्या हम इसके लिए तुम्हारा परित्याग कर दें?

नहीं, तुम्हारी विषाद-युक्त मुस्कान से हमारे त्रिषित नेत्रों की प्यास बुझ जाती है।

तुम्हारा अगाध प्रेम मुझे बहुत भाता है।

तुमने हमें जीवनपान तो करा दिया, किन्तु तुम हमें अमरत्व प्रदान न कर सकी। इसी कारण तुम्हारी आँखों से नींद हमेशा के लिए दूर हो गयी है।

युगों से तुम नाना प्रकार के रंगों तथा गीतों द्वारा स्वर्ग की रचना करने के लिए अथक प्रयास कर रही हो, किन्तु तुम्हारा वह स्वर्ग अभी तक निर्मित न हो पाया। उसका अकिंचन आभासमात्र ही अभी निर्मित हो पाया है।

तुम्हारी सुन्दर सृष्टि पर आँसुओं का कुहासा छाया हुआ है।

तुम्हारे मूक हृदय को मैं अपनी स्वर-लहरी द्वारा मुखरित कर दूँगा।

मैं अपनी भुजाओं के श्रम द्वारा तुम्हारी उपासना करूँगा।

हे वसुन्धरे! मैंने तुम्हारा कोमल चेहरा देख लिया है। मैं तुम्हारी इस शमशान धूल से भी अत्यन्त अनुराग रखता हूँ।

❀

७४

जिस प्रकार इस दुनिया की लम्बी-चौड़ी मजलिस में साधारण तिनका भी सूरज की किरणों तथा आधी रात के धवल नक्षत्रों की बराबरी में बैठने को स्थान पाता है,

उसी प्रकार दुनिया के दिल में मेरे गीत भी मेघों तथा वनों के गीत के साथ ही समस्थित हैं।

किन्तु, दौलतवालो! तुम्हारी दौलत को न तो भगवान् अंशुमाली के सरल तथा आनन्द में सराबोर सौन्दर्य का ही कोई भाग प्राप्त है और न ध्यान-निमग्न चाँद की ही शीतल ज्योति में स्थान है।

नीले आकाश की विभूति भी तुम्हारी धनराशि को नहीं प्राप्त होती।

और, वह दौलत मौत के समीप आने पर तो हीन होकर खाक में मिल जाती है।

❀

७५

आधी रात के समय भावी योगी ने कहा :—

"अपना घर-द्वार छोड़कर भगवान् की तलाश में निकलने का यही समय है। आह! अभी तक मुझे किसने भ्रम (मायाजाल) में फँसा रक्खा था?"

भगवान् धीरे से बोले—"मैंने"—किन्तु मनुष्य के तो कान बन्द थे।

बच्चे को स्तन से चिपकाये हुए उसकी स्त्री गहरी नींद में थी।

तपस्वी बोला—"इतने समय तक मुझे भुलावा में डाल रखने वाले तुम दोनों कौन हो?"

फिर दैवी वाणी हुई—"यही भगवान् हैं।" किन्तु उसने यह भी नहीं सुना।

बच्चा सहसा चिल्ला उठा और माता से चिपट गया।

भगवान् ने आज्ञा दी—"मूर्ख, रुक जा। अपना घर-बार न छोड़!" किन्तु उसने फिर भी न सुना।

भगवान् लम्बी साँस खींचकर बोले—"आह! मेरे सेवक मुझे छोड़कर फिर मेरी ही तलाश में क्यों भटकते फिरते हैं।

❋

७६

देवालय के सम्मुख मेला लगा हुआ था। प्रातःकाल ही से वर्षा आरम्भ हो गयी थी और सम्पूर्ण दिन होती रही। अब दिन का अवसान होने वाला था।

इकत्रित भीड़ में से, सबसे अधिक प्रफुल्लित वह बालिका थी, जिसने एक पैसे पर एक ताड़ की पिपिहरी खरीदी थी।

उस पिपिहरी की तेज, उल्लासमय चीत्कार ने मेले के कोलाहल को दबा दिया।

एक अपार जनसमूह वहाँ आकर इकत्रित हो गया। मार्ग में कीचड़-ही-कीचड़ थी, नदी का पानी बढ़ आया था तथा लगातार पानी बरसने के कारण खेत डूब गये थे।

सबसे अधिक दुःखी वह बालक था जिसकी जेब में रँगा सोटा खरीदने के लिये एक पैसा न था।

दूकान की ओर ललचाई नजर से देखती हुई उसकी आँखों ने इकत्रित भीड़ को दयनीय बना दिया।

*

७७

पश्चिम-देश से आया हुआ कामगार तथा उसकी पत्नी पजावे के लिए ईंट बनाने को मिट्टी खोदने में लगे हुए हैं।

उनकी छोटी लड़की प्रतिदिन नदी किनारे जाती तथा बरतन माँजा करती।

घुटवाट सिर वाला उसका छोटा भाई अपने नंगे शरीर में धूल लपेटे हुए उसके पीछे-पीछे जाता तथा संतोष के साथ ऊँचे टीले पर बैठा रहता।

वह छोटी लड़की जल का घड़ा सिर पर रखे, बायें हाथ में पीतल की झारी लटकाये और दाहिने हाथ से अपने भाई को पकड़े घर वापिस आती।

उसकी बहिन बालू से लोटा माँज रही थी।

समीप ही किनारे पर मुलायम बालोंवाला भेड़ का एक छोटा-सा बच्चा चर रहा था।

चरते-चरते वह मेमना लड़के के पास आकर मैं-मैं कर उठा जिससे लड़का चिहुक कर रोने लगा।

उसकी बहिन उसके पास दौड़ी आयी।

उसने अपने भाई और मेमने—दोनों को अपनी गोद में उठा लिया और दोनों को प्रेम-सूत्र में बाँध दिया।

*

७८

मई का महीना था। उष्ण मध्याह्नकाल लम्बा प्रतीत होता था। शुष्क धरती चिलचिलाती धूप से व्यग्र हो उठी थी।

इतने में नदी के किनारे से किसी ने पुकारा—"मेरी प्रियतमे! आओ।"

मैंने झट पुस्तक बन्द कर दी और उत्सुकतापूर्वक वातायन खोला।

खिड़की खोलने पर क्या देखता हूँ कि कीचड़ में सनी हुई एक भैंस नदी-किनारे खड़ी होकर देख रही है, और एक आदमी उसे नहलाने के लिए बुला रहा है।

यह देखकर मैं हँस पड़ा तथा मेरे हृदय में माधुर्य का स्पर्श हो उठा।

*

७६

मैं अक्सर यह जानने के लिए उत्सुक रहता हूँ कि उन मनुष्यों तथा पशुओं के आपसी परिचय की परिधि कहाँ है जिन्हें अपने भावों को प्रकट करने की भाषा नहीं मालूम है।

बीते जमाने की किसी प्राथमिक स्वर्गस्थली के किसी सुदूरवर्ती सृष्टि के प्रभात में वह कौन-सा सुगम रास्ता था जिस पर उनके हृदय मिले थे।

यद्यपि उनका सम्बन्ध बहुत पहले ही भूल चुका है तथापि उनके पर्यटन के वे पद-चिह्न अभी तक बने हुए हैं।

अब भी कभी-कभी पूर्वस्मृति जाग उठती है। और पशु, मनुष्य की तरफ स्नेहपूर्वक देखता है तथा मनुष्य कौतूहल-पूर्ण प्रेम से उसकी तरफ देखता है।

ऐसा लगता है, ये दोनों मित्र छद्मवेष में मिले हैं तथा अपने बाहरी वेष का भेदन कर दोनों अस्पष्ट रूप से एक दूसरे को पहिचान लेते हैं।

*

८०

शुभ्रे ! तुम सिर्फ अपनी कटाक्ष से कवियों के गायनों का सुन्दर खजाना लूट सकती हो।

किन्तु, तुम उनकी प्रशंसा पर कान नहीं करती हो, इसीलिए मैं तुम्हारी वंदना करने आया हूँ।

बड़े-बड़े अभिमानियों के मस्तक को तुम अपने पैरों पर नत करा सकती हो।

किन्तु, तुम अपने प्रेमियों की ही उपासना करती हो और इसीलिए मैं भी तुम्हारी पूजा करता हूँ।

तुम्हारे कमलवत् हाथों की आगरता अपने स्पर्श द्वारा राजश्री को भी यशी बनाने योग्य है।

किन्तु, तुम अपने हाथों का उपयोग अपना घर बुहारने में करती हो और मेरे भयभीत होने का यही कारण है।

*

८१

मृत्युदेव, मेरे मृत्युदेव! तुम मन्द स्वर में क्यों बात कहते हो?

जब शाम को फूल कुम्हलाने लगते हैं, और पशु अपने स्थानों पर वापिस आते हैं, उस समय तुम धीरे से मेरे पास आते हो, और मुझसे अस्पष्ट बातें कहते हो।

क्या प्रेम की यही रीति है? क्या तुम अपने अस्फुट शब्दों का ही मादक प्याला पिलाकर जीत का सेहरा अपने गले में बाँधोगे, मृत्युदेव!

क्या हम दोनों के विवाह का उत्सव धूम-धाम से नहीं मनाया जायगा?

क्या तुम अपने जटाजूटों को फूलों के हारों से नहीं बाँधोगे?

क्या झंडी लेकर तुम्हारे आगे-आगे चलनेवाला कोई नहीं है, और क्या तुम्हारे लाल रंग की मसालों के प्रकाश से रात्रि आलोकित न होगी, मृत्युदेव!

तुम अपने शंखनाद करते हुए आओ।

मुझे लाल रंग की ओढ़नी ओढ़ाकर मेरा हाथ पकड़ करके ले चलो।

मेरे द्वार पर हिनहिनाते हुए घोड़ों का रथ तैयार रखो।

मेरा घूँघट ऊपर उठाओ, और सगर्व मेरी ओर देखो मृत्युदेव! मेरे मृत्युदेव!

*

८२

आज की रात मुझे तथा मेरी वधू को मृत्यु-क्रीड़ा करनी है।

घुप अन्धेरी रात है, आकाश के बादल पागल हो रहे हैं तथा समुद्र की चंचल लहरें भयंकर गर्जन कर रही हैं।

हमने सपने का सेज छोड़ दिया है, अपने द्वार के फाटक खोल दिये हैं, और दोनों बाहर निकल आये हैं—मैं और मेरी वधू।

हम दोनों एक झूले पर बैठ जाते हैं तथा तूफान पीछे से भयंकर पेंगे देकर अग्रसर करता है।

मेरी पत्नी भय से चौंक उठती है और थरथरा कर मेरे कलेजे से लग जाती है।

मैंने बहुत समय तक उसकी सेवा-सुश्रूषा की है।

मैंने उसके लिए एक फूलों की शय्या बनायी तथा उसकी आँखों को दुखदायी रोशनी से बचाने के लिए दरवाजा बन्द कर दिया।

मैंने कोमलतापूर्वक उसके होठों का चुम्बन किया और गूढ़ बातें उसके कानों में तब तक कही जब तक वह आलस्य-तन्द्रा में लीन न हो गयी।

वह किसी अनन्त कुहासे में लीन हो गयी।

छूने पर वह कोई जवाब नहीं देती तथा मेरे गीत भी उसकी तन्द्रा भंग करने में असमर्थ हैं।

आज की रात हम दोनों को खौफनाक नेपथ्य से झंझावात की दावत मिली है।

मेरी पत्नी थर्राकर उठ खड़ी हुई। वह मेरा हाथ पकड़कर बाहर निकल आयी।

उसके बाल हवा में फरफरा रहे हैं, उसका घूँघट काँप रहा है, उसका हार हिल रहा है।

मौत के धक्के ने उसमें पुनः सजीवता ला दिया है।

अब हम और हमारी वधू प्रगाढ़ आलिंगन में लीन खड़े हैं।

८३

पहाड़ी की तलेटी में मकई के खेत के किनारे वह उस पानी के सोते के समीप रहा करती थी, जो हिलोरें लेता हुआ पेड़ों की गम्भीर छाया में बहता था। स्त्रियाँ वहाँ अपनी गगरी भरने आतीं तथा थके-माँदे मुसाफिर वहाँ बैठकर आराम करते। वह वहाँ नदी के कल-कल शब्दों में लीन रहकर ही अपना काम करती तथा विचार-सागर में गोता लगाकर आनन्द लिया करती।

एक दिन वह अजनबी मेघावृत्त उपत्यका पार से आया। उसकी जटा सोये हुए साँपों की भाँति उलझी हुई थी। हम लोगों ने अचरज के साथ पूछा—"तुम कौन हो ?" किन्तु वह निरुत्तर हो कुटी की ओर देखने लगा। उसके इस अद्भुत व्यवहार को देखकर हमारे दिल सशंकित हो उठे और रात हो जाने पर हम लोग घर वापिस आये।

दूसरे दिन सबेरे जब स्त्रियाँ जल भरने के लिए देवदार के झुरमुट के पास पहुँचीं, तो उसके घर का दरवाजा खुला मिला। अब न तो वहाँ उसकी बोली ही सुनायी पड़ती और न उसका उल्लिखित चेहरा ही नजर

आता। धरती पर एक रिक्त गगरी पड़ी थी तथा दीया जल कर गुल हो गया था। किसी को पता नहीं था कि सवेरा होने के पहले ही वह चली कहाँ गयी, और वह अजनबी भी तो वहाँ से गायब हो गया था।

मई के महीने में जब प्रचण्ड गरमी से बरफ पिघली तब हम लोग उस सोते के पास बैठकर शोक से विह्वल हो उठे। हम लोग आश्चर्य-चकित हो सोचते—"जहाँ वह गयी है, क्या वहाँ भी कोई स्रोत है।" मानसिक वेदना के कारण हम परस्पर पूछते—"इस पहाड़ी प्रदेश के उस पार क्या कोई और स्थान है?"

ग्रीष्म ऋतु की रात थी। दक्षिणी पवन संचरित हो रहा था। मैं उसके सुनसान कमरे में बैठा हुआ था, जहाँ पर अभी तक दीया जलाया नहीं गया था। सहसा वह पहाड़ी मेरे दृष्टिपथ से ओझल हो गयी। अहा! वह तो चली आ रही है। सुभगे! कहो, कैसी हो? किन्तु इस खुले आसमान के नीचे तुम विश्राम कहाँ करती होगी? और अफसोस! मेरा वह स्रोत भी तो यहाँ नहीं है जिससे तुम्हारी प्यास बुझ सकती!

उसने जवाब दिया—"यहाँ भी वही आसमान है, किन्तु पहाड़ियों की सरहद नहीं बनी है, यहाँ पर भी वही

पानी का चश्मा है, किन्तु यहाँ वह नदी के रूप में परिणित हो गया है। यहाँ भी वही धरती है, किन्तु वह एक समस्थली के रूप में है।"

मैंने साँस खींचकर कहा—"सब कुछ तो है, किन्तु हम्हीं लोग नहीं हैं।"

उसने सविषाद उत्तर दिया—"किन्तु तुम मेरे दिल में तो हो।"

मैं जग गया। मुझे चश्मे का कलकल शब्द तथा देवदार की खड़खड़ाहट पुनः सुनायी पड़ने लगी।

❀

८४

हरे तथा पीले रंग के धान के खेतों पर फागुन की बदरी अपनी छाया डालती उड़ी चली जा रही है और भगवान् सूर्यदेव द्रुतगति से पीछा कर रहे हैं।

शहद की मक्खियाँ उन्मत्त होकर गुनगुनाती फिरती हैं, और शहद पीना भी भूल गयी हैं।

टापुओं पर अकारण ही हंस हर्षित होकर ध्वनि कर रहे हैं।

आज न तो कोई घर जाना और न काम-काज करना।

आओ, आज हम सभी नील गगन पर धावा बोल दें और शून्य वायुमंडल का खजाना लूट लें।

सैलाब के पानी के ऊपर जिस तरह फेन उठता है उसी तरह हास्य आज हवा में व्याप्त हो रहा है।

आओ, आज हम लोग अपना प्रातःकाल निरर्थक गीतों में ही बर्बाद कर दें।

❀

८५

आज से सैकड़ों सालों के बाद मेरी कविता को पढ़नेवाले तुम कौन हो ?

मैं इस वसन्त-सम्पत्ति में से एक फूल भी भेजने में असमर्थ हूँ। मैं इस मेघमाला की एक किरण भी तो नहीं प्रेषित कर सकता।

अपना दरवाजा खोलकर बाहर तो देखो !

अपनी पुष्पवाटिका से तुम सैकड़ों वर्ष पहले के लुप्त फूलों की खुशबूदार स्मृतियाँ इकत्रित कर लो।

भगवान् करे, तुम अपने दिल की खुशी के साथ-साथ उस आनन्द का भी अनुभव करो। जिसने किसी गुजरे हुए वसन्त ऋतु के प्रभात में गा-गाकर अपनी मस्त तान सैकड़ों साल आगे पहुँचाया था।